सेशू का शेर
शेषाद्री (सेशू), चार वर्ष, सरदार पटेल विद्यालय, दिल्ली

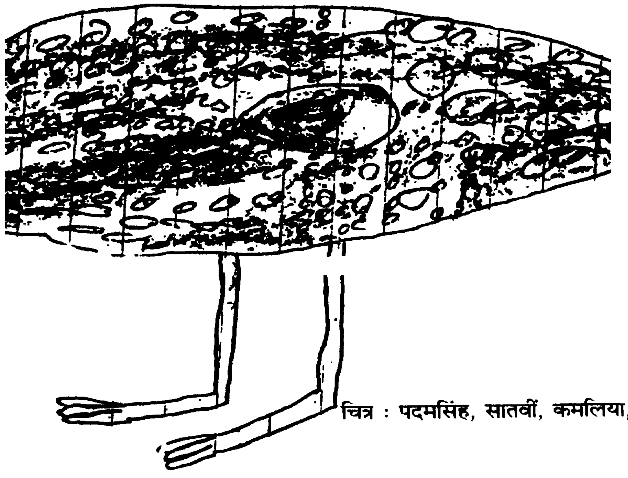

चित्र : पदमसिंह, सातवीं, कमलिया, लसूड़िया, मंदसौर

चकमक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष 4 अंक 3 सितंबर, 1988

संपादक:

विनोद रायना

संपादक मंडल:

राजेश उत्साही, हरिप्रसाद जोशी

कला:

जया विवेक

उत्पादन/वितरण

हिमांशु बिस्वास, कमलसिंह

चकमक का चंदा

छमाही: 15 रुपए

वार्षिक: 30 रुपए

डाक खर्च मुफ्त

चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।

कृपया चेक न भेजें।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता:

ई-1/208, अरेरा कालोनी

भोपाल-462 016 (म.प्र.)

इस अंक में...

पाठक लिखते हैं	2
मेरा पन्ना	3
आंख की कहानी	7
कहानी : **अपनी बुद्धि का मार्ग**	10
कविता : **रिमझिम पानी बरसा**	12
अपनी प्रयोगशाला	14
खतरा; स्कूल	18
हमारी कला : **सांचा**	24
खरमोर	26
धारावाहिक : **नन्हा राजकुमार**	28
माथापच्ची	34
गिजुभाई : **तीरंदाज़**	36

आवरण : कैरन

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

पाठक लिखते हैं

मैं चकमक का नियमित पाठक हूं। मुझे अपनी प्रयोगशाला, माथापच्ची, सवालीराम जैसे रोचक व ज्ञानवर्धक स्तंभ बहुत अच्छे लगते हैं।

कविताओं की अपेक्षा कहानियां बहुत कम रहती हैं। कृपया कहानियों की संख्या बढ़ाएं। 'चाचा चकमक' नियमित रूप से प्रकाशित करें।

☐ **प्रदीप सेठ, देवसर, सीधी**

मैं और मेरी बहनें चकमक पुस्तक पढ़ती हैं। हमने चकमक को अपना एक प्रिय साथी बना लिया है। हमें हर महीने चकमक का इंतजार रहता है। चकमक में हमें माथापच्ची, अपनी प्रयोगशाला, जो उसमें कहानियां रहती हैं वे पसंद आईं। जब से हमने चकमक पढ़ी तब से हमें बहुत बाहरी ज्ञान प्राप्त हुआ।

हमें जून का चकमक बड़ा आकर्षक लगा। जिसमें सवालीराम का तो जवाब ही नहीं।

☐ **रूबी, सुभाष, रश्मि, सागर**

भूखे को रोटी का
किसान को फसल का
अफसर को रिश्वत का
बच्चों को चकमक का
इंतजार है!

☐ **राजेश गुप्ता, दसवीं, भाण्डेर, ग्वालियर**

मैंने चकमक ट्रेन में सफर करते हुए अपने बाल सहयात्री के हाथ में देखी। लेकर पढ़ी। सच मानिएगा पढ़कर यात्रा की थकान, भीड़ का तनाव जो गर्मी की बढ़ती तपन के साथ सरदर्द बन गया था न जाने कहां काफूर हो गया।

☐ **कुमारी राजेश रस्तोगी, मेरठ.**

जून अंक पढ़कर प्रसन्नता हुई। 'बताइए मैं नकल क्यों न करूं?' काफी पसंद आया। यह मन को उद्वेलित कर गया, साथ ही सोचने को मज़बूर भी।

'मोमबत्ती के साथ कुछ प्रयोग' भी अच्छा लगा।

मैं एक शिक्षक की हैसियत से यह सुझाव देना चाहूंगा कि चकमक में सामान्य ज्ञान का कालम बढ़ा दिया जाए। जिसमें देश विदेश की जानकारियां हों तो चकमक में चार चांद लग जाएंगे।

☐ **राजेन्द्र तिवारी, दताना, उज्जैन**

चकमक को करते हम प्यार
अब तो हो गई वो मेरी यार
माथापच्ची दिमाग खा लेती
चैन हमें नहीं लेने देती
सवालीराम के सवाल अजीब
जवाब निकलते नहीं मेरा जीव
कहानी नाटक ज्ञान बढ़ाते
हमको अच्छी राह दिखाते
चकमक करती है हमको मज़बूर
पढ़ेंगे अब उसे ज़रूर
चकमक करती हमको प्यार
चकमक को करते हम प्यार!

☐ **घनश्याम पटवा, जुझारपुर, दतिया**

मैं वैसे तो चकमक का दो वर्ष से पाठक हूं। लेकिन अब मेरी रुचि और बढ़ गई है। क्योंकि इसमें विज्ञान के बारे में भी पढ़ने को मिलता है। जून 88 के अंक में 'दिन एक - सूर्य अलग अलग' तथा 'मानव की कहानी' पसंद आया।

☐ **लक्ष्मण चावड़ा, देवास**

चकमक आते ही मैं उछल पड़ता हूं। फिर जैसे बकरी पेड़ की एक-एक पत्ती चर जाती है, वैसे ही मैं चकमक का एक-एक अक्षर पढ़ जाता हूं। मुझे जून अंक में 'हड्डी' नाटक अच्छा लगा। क्योंकि इसमें आपने समानता का परिचय दिया है। 'मानव की कहानी' भी अच्छी लगी। 'गिजुभाई की कलम से' भी अच्छी लगी।

☐ **पुष्पराज नारायण पाठक, लतार**

जून अंक के सभी लेख अच्छे लगे। विशेषकर गिजुभाई की कलम से 'घर में बालक का स्थान क्या है?' इसे पढ़कर हर पालक को शिक्षा लेनी चाहिए कि वह अपने बच्चों की रुचि के अनुरूप कैसे बर्ताव करें। यह पत्रिका इतनी जल्दी लोकप्रिय हो चुकी है कि इसे हर परिवार में अपना कर पढ़ने लगे हैं।

☐ **रामनिवास शर्मा, बाईजगवाड़ा**

चकमक के नए अंक में 'नन्हा राजकुमार' का इतना सुंदर अनुवाद पढ़कर दिल बाग-बाग हो उठा। हार्दिक बधाई।

☐ **अरविंद गुप्ता, पूना**

चकमक पत्रिका का जुलाई, 88 अंक पढ़ा। काफी प्रभावित हुआ। चकमक पत्रिका वास्तव में काफी उपयोगी है। इसकी निरंतरता बनी रहे।

हम बच्चों के लिए यह एक बहुत अच्छी ज्ञानवर्द्धक पत्रिका है। विशेष रूप से मुझे धारावाहिक : नन्हा राजकुमार, एवं कहानी : गुलेल का खेल बहुत पसंद आई।

☐ **संतोष मरकाम, डोरा, बालाघाट**

जुलाई अंक में रवीन्द्रनाथ ठाकुर, भीष्म साहनी की रचनाओं के साथ मध्यप्रदेश, राजस्थान की 'साइक्लोस्टाइल्ड' बच्चों की पत्रिकाओं का रचनाओं सहित परिचय दिलचस्प है। वैज्ञानिक जानकारी की प्रामाणिक प्रस्तुति और स्वस्थ्य मनोरंजन का चकमक में अच्छा संतुलन है।

☐ **वाचस्पति, जयहरी खाल, उ.प्र.**

चकमक के जुलाई, 88 के अंक में आपने 'बालचिरैया' व 'बालकलम' जैसी छोटी किंतु अभिव्यक्ति की दिशा में प्रयासरत पत्रिका के बारे में जानकारी दी इसके लिए आप बधाई के पात्र हैं। 'नन्हा राजकुमार' धारावाहिक की पहली ही किस्त ने मन को मोह लिया है। 'गिजु भाई की कलम' बच्चों के साथ-साथ अभिभावकों को भी प्रेरणा देती है। 'नारू की मार' ने सभी का ध्यान ग्रामीण समस्याओं की ओर खींचा। 'अपनी प्रयोगशाला', 'सवालीराम' व 'माथापच्ची' स्तम्भ अच्छे लगे। पत्रिका के चौथे वर्ष में प्रवेश पर बधाई।

☐ **मुकेश स्वर्णकार, बालौदा**

मुझे जुलाई, 88 का अंक अच्छा लगा। क्योंकि आपने इसमें एक धारावाहिक शुरू किया है 'नन्हा राजकुमार'। सवालीराम से 'बिजली की खोज' के बारे में मालूम पड़ा। गिजुभाई से 'घर में बालक का स्थान' प्राप्त हुआ और 'नारू रोग की मार' पता चला। मैंने यह अंक रात के एक बजे तक पढ़ा।

मैं चकमक के सभी कार्यकर्त्ताओं को चकमक के चार वर्ष पूरे होने पर बधाई देता हूं और आशा करता हूं कि चकमक को निरंतर चलाते रहेंगे।

मैं एक सुझाव देना चाहता था कि आप हर वर्षगांठ पर कुछ विशेष दिया करें या जैसे अब दीपावली आएगी तो 'दीपावली विशेषांक'।

☐ **कमलेश खैरिया, भोपाल**

मेरा पन्ना

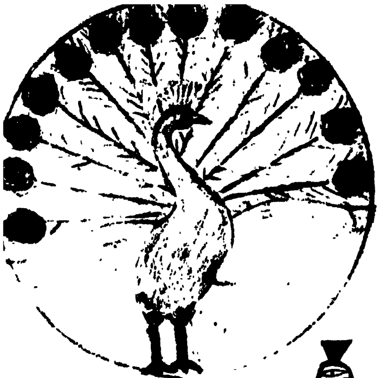

जगदीश चौहान, नवमीं,
घरगांव, खरगोन

के.एस. परमार, आठवीं, चांदाखेड़ी, देवास

राधेश्याम मण्डारा, आठवीं, उन्हेल, उज्जैन

राखी परसाई, पांचवीं,
खजूरी पथ, मदसौर

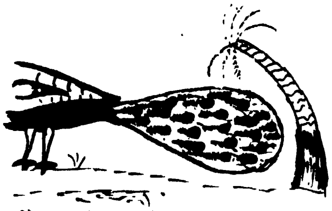

रीतेश, आठवीं, पालड़ा, देवास

बृजेश जोशी, खातेगांव, देवास

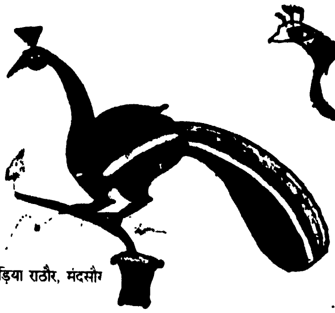

श्यामलाल, सातवीं, लसूड़िया राठौर, मंदसौर

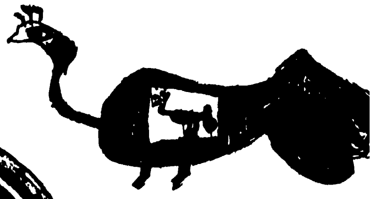

ओमप्रकाश, तीसरी, अरलावदा, देवास

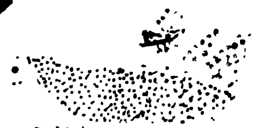

किशोरी वैष्णव, सात वर्ष, अर्जुनी, रायपुर

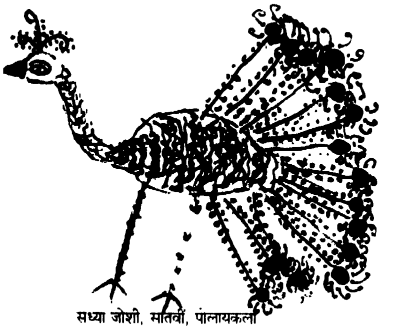

संध्या जोशी, सातवीं, पालायकलां

अजय कामठे, छटवीं, हरसूद

प्रकाशचंद [illegible],
लसूड़िया राठौर, मंदसौर

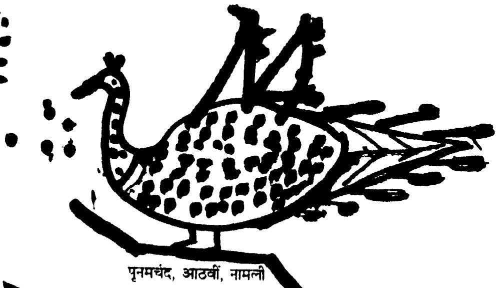

पूनमचंद, आठवीं, नामली

प्रह्लाद सेन, सातवीं, लसूड़िया राठौर, मंदसौर

नंदलाल चौहान, छटवीं, मतखेलिया

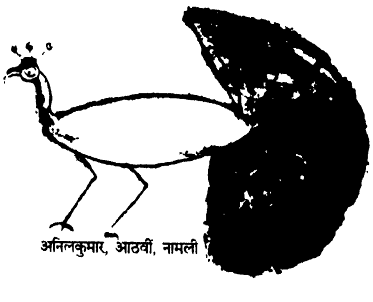

अनिलकुमार, आठवीं, नामली

असली - नकली

एक दिन की बात है। एक निरीक्षक महोदय स्कूल देखने आए। आते ही एक कक्षा में घुस गए और पूछा, "कक्षा का प्रथम छात्र कौन है?"

एक छात्र खड़ा हुआ। निरीक्षक महोदय ने उससे कुछ प्रश्न पूछे। सही उत्तर पाकर संतुष्ट हो गए। उसके बाद उन्होंने द्वितीय छात्र से भी कुछ प्रश्न पूछे। लेकिन जब तृतीय छात्र की बारी आई तो फिर प्रथम छात्र ही उठ खड़ा हुआ।

निरीक्षक महोदय ने कहा, "यह क्या तमाशा है? तुम तो प्रथम छात्र हो!"

उस छात्र ने सहज भाव से कहा, "जी हां महोदय।"

"तो फिर? मैं तो तृतीय छात्र से प्रश्न पूछना चाह रहा हूं, तुम क्यों खड़े हुए हो?"

उस छात्र ने कहा "महोदय मैं तृतीय छात्र की एवज में ही खड़ा हुआ हूं। वह फुटबाल प्रतियोगिता में भाग लेने चला गया है। जाते-जाते वह कह गया है कि अगर मुझसे सवाल पूछना चाहें तो तुम्हीं जवाब दे डालना।"

निरीक्षक महोदय शिक्षक की तरफ मुखातिब हुए और बोले, "क्यों साहब आप इस छात्र को पहचानते हैं?"

शिक्षक महोदय हकलाते हुए बोले, "जी महोदय गुस्ताखी माफ हो। यहां मैं किसी को नहीं पहचानता।"

निरीक्षक महोदय गरम होते हुए बोले, "क्या मतलब?"

इस पर शिक्षक महोदय ने कहा, "दरअसल बात यह है कि मैं असली शिक्षक नहीं हूं, असली शिक्षक अपनी बीमार पत्नी के लिए दवा लेने चले गए हैं। उनकी जगह मैं आया हूं।"

निरीक्षक महोदय ने कहा, "गनीमत है कि मैं भी असली निरीक्षक नहीं हूं! अपने मित्र की एवजी में आया हूं। वरना आज तुम्हारी नौकरी चली गई थी।"

☐ **दीपा अग्रवाल, बारहवीं, भोपाल**

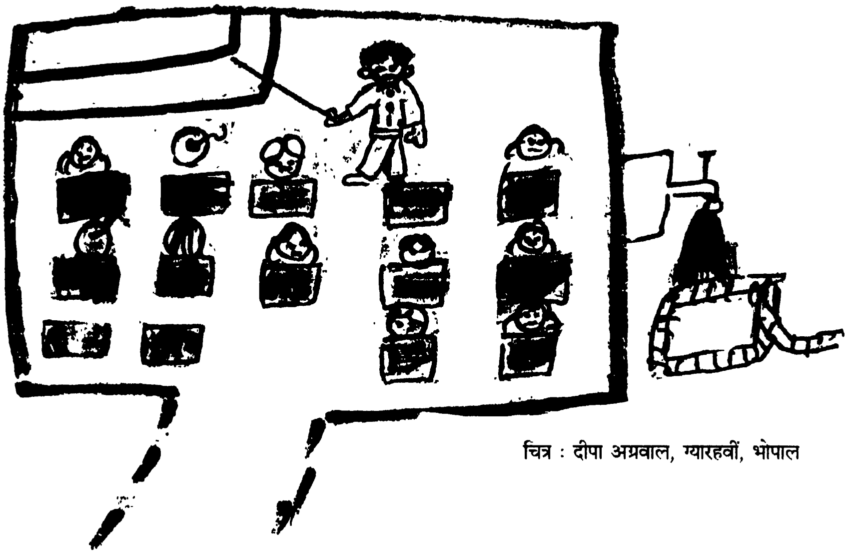

चित्र : दीपा अग्रवाल, ग्यारहवीं, भोपाल

कुत्ता पालूंगा ज़रूर

कुत्ता पालूंगा ज़रूर चाहे जान चली जाए।
कुत्ते का कान जैसे लूनाहेड़ा का पान
पान खाऊंगा ज़रूर चाहे जान चली जाए।
कुत्ते की आंख जैसे निम्बू की फांक
फांक खाऊंगा ज़रूर चाहे जान चली जाए।
कुत्ते की पूंछ जैसे मर्द की मूंछ
मूंछ मरोडूंगा ज़रूर चाहे जान चली जाए।
कुत्ते की पीठ जैसे स्कूटर की सीट
सीट पर बैठूंगा ज़रूर चाहे जान चली जाए।
कुत्ते का पेट जैसे बंबई का सेठ
सेठ बनूंगा ज़रूर चाहे जान चली जाए।

☐ **पूनम चंद्र कुमावत, लसूड़िया राठौर, मंदसौर**

शहर जाने की धुन

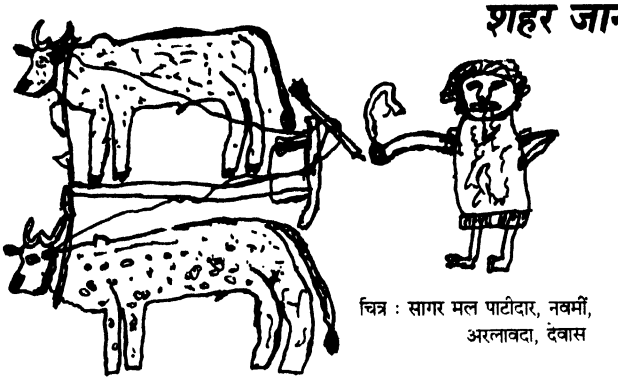

चित्र : सागर मल पाटीदार, नवमीं, अरलावदा, देवास

अभी आसमान में एक तारा ही दिख रहा था कि मैं उठ गया। देखा तो बंगले का लाइट जल रहा था और बैलगाड़ी खड़ी थी।

मैं समझ गया कि आज कपास बेचने हरदा की मंडी जा रहे होंगे। मैं झटपट उठ गया। मुंह-हाथ धोकर जब रसोईघर में गया तो वहां काकीजी आटा गूंथ रही थीं। शायद वे काकाजी के लिए परांठे बना रही होंगी।

काकाजी और भैया को आज कपास बेचने जाना था। इसलिए वो तीन बजे रात से गाड़ी में कपास भरने लगे, ताकि सवेरे-सवेरे हरदा पहुंच जाएं। गर्मी के दिन थे कहीं धूप ज़्यादा हो गई तो बैल परेशान होंगे।

वैसे भी बम्हनगांव (हमारा गांव) से बीस किलोमीटर का रास्ता है। जाने में दो-तीन घंटे लग जाते हैं।

निश्चय ही सवेरे के छह बज चुके थे।सूरज उग चुका था। वे अब जाने लगे। मैंने भी कपड़े बदल लिए और जाने की तैयारी करने लगा और गाड़ी में बैठ गया।

काकाजी ने कहा, 'तू क्या करेगा। बस हम जाएंगे और शाम तक तो आ ही जाएंगे।'

मैं बहुत दिन से शहर नहीं गया था। जब से मैं काकाजी के यहां आया, तब से अब तक रहकर किचवा गया था। इसलिए मैंने कहा,'मैं भी जाऊंगा।'पर काकाजी ने मेरी एक न मानी। उनने मुझे गाड़ी से उतारकर काकी से पकड़ने को कहा। काकी ने मुझे इतनी जम कर पकड़ लिया कि मैं एक कदम भी आगे नहीं बड़ पाया।

काकी ने मुझे दस-पंद्रह मिनट तक पकड़ कर रखा। फिर मुझे सबसे अलग ले गईं और मुझे सेव दी। मैंने सेव नहीं खाई और एक कमरे के कोने में जाकर बैठ गया।

मैं सोच रहा था कि यदि मुझे भी हरदा मंडी ले जाते तो क्या होता। मैं भी शहर देख लेता। उनका क्या बिगड़ जाता। उस समय मैं बहुत गुस्से में था। मैं किसी से बात नहीं कर रहा था। मेरा मन उचट चुका था।

इतने में मैंने पड़ोसियों की कुछ बात सुनी। वे कुछ सौतेलेपन की बात कह रहे थे। मैं कुछ देर तक सुनता रहा और फिर छत पर बैठ गया। सोचने लगा, ये मुझे नहीं ले गए तो क्या मैं खुद ही साइकिल से चला जाऊंगा।

मेरी उमर बारह वर्ष की थी। मैं साइकिल की चाबी खोजने लगा। आखिर मुझे चाबी मिल गई और मैंने साइकिल को बाहर निकाला।

जब मैं साइकिल चलाने लगा तो देखा कि वह तो पंचर है। मैंने साइकिल वापस रख दी और सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए। क्योंकि उस समय मैं छोटा था और गुस्से में था। मेरे से कोई बात भी नहीं कर रहा था। मैं अकेला पड़ गया।

मैं घर से कुछ रोटी और अचार लेकर खले में छुपा आया। फिर घर आकर मैंने काकी से गुस्से में बोला, 'मैं पैदल शहर जा रहा हूं।'

काकी ने मेरा मज़ाक उड़ाते हुए कहा, 'हां जा, अभी थोड़ी देर में भूख लगेगी तो वापस आ जाएगा।'

मेरा क्रोध और बढ़ गया। मैंने एक लकड़ी ली और मैं हरदा जा रहा हूं कहकर चल दिया। फिर मैं खले में पहुंच गया। वहां से मैं अपनी छुपाई हुई रोटी और अचार को लेकर चल पड़ा। गांव के बाहर एक नहर थी और उसके पास हमारा खेत था।

जब तक मैं नहर पर पहुंचा। तब तक 11 बज चुके थे और मुझे पसीना निकल रहा था। मैंने सोचा अब मैं नहर में स्नान कर लेता हूं।

मैंने कपड़े उतारे और स्नान कर लिया और फिर चल पड़ा। वहां पर मुझे मेरा एक मित्र मिल गया। उसने कहा, 'कमलेश कहां जा रहा है?'

मैंने अकड़कर कहा, 'हरदा।' यह सुनकर वह हंसने लगा और कहने लगा; कि'तुम्हारा दिमाग तो नहीं फिर गया। इस सड़ी गरमी में तुम हरदा जाओगे।'

मैंने कहा, 'हां।'

उसने कहा, 'क्यों क्या काम है?'

मैंने कहा, 'शहर घूमना है।'

उसने कहा, 'रास्ते में तुम्हें "कालाबिल्या" मिलेगा वह

बच्चों को पकड़ लेता है और कपड़े उतार कर हल में जुतवाता है। बहुत मारता है।'

मैंने यह सुना तो मैं डर गया। फिर मैंने कहा, 'मेरे पास ये डंडा है। इससे मैं उसे मारूंगा और भाग जाऊंगा।'

मेरे दोस्त ने कहा, 'कहां जाओगे उसके पास जादू मंत्र की विद्या भी है। वह तुम्हें मार डालेगा। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि वह दिखता नहीं है।'

मैंने कहा, 'जा तू तो डरपोक है।'

मित्र की बात सुनकर मैं बहुत भयभीत हुआ और लौट गया नहर के पास। वहां जाकर मैंने पानी पिया। मुझे बहुत जोरों से भूख लगी थी। मैंने वहां से कुछ खाकरे के पत्ते तोड़े और उन्हें धोकर एक पातल बना ली और एक दोना।

वहां से थोड़ी दूर एक नीम का पेड़ था। वह बहुत बड़ा था और लंबा भी था। मैं वहां गया और खाना खाया। मेरा पेट भर चुका था। मैं नीम के नीचे बैठ गया और सोचने लगा। यदि मैं शाम तक यहां रहूं तो कैसा रहे।

इतने में एक कुत्ता मेरी तरफ आया। वह ज़ोर-ज़ोर से भौंक रहा था। वह एक किसान का कुत्ता था और बड़ा ही वफादार था। वह उसके खेत के अंदर किसी को नहीं आने देता था। मैं जल्दी से पेड़ पर चढ़ गया और पेड़ घना होने के कारण मैं उसमें छुप गया। पेड़ का तना इतना मोटा था कि उसमें से मैं कुत्ते को दिख न सका। थोड़ी देर बाद कुत्ता वापस चला गया।

मैं पेड़ से नीचे उतर गया और नहर में पानी पिया और हाथ-पांव धोए। अचानक मुझे एक मोटर साइकिल की आवाज़ सुनाई दी। मैंने सोचा यदि मुझे किसी ने देख लिया तो पोल खुल जाएगी कि मैं शहर नहीं गया।

मैं तुरंत उठा और आम के पेड़ की तरफ भागने लगा, सोचा इसके पीछे छुप जाऊंगा। पर वहां उसका माली घर जाने की तैयारी कर रहा था। मैंने सोचा थोड़ी देर चुपचाप बैठा रहूं। जब यह माली चला जाएगा तो पेड़ पर बैठ जाऊंगा।

कुछ देर बाद माली टोकरी में बहुत सी कैरियां लिए घर की ओर चल दिया। जब वह काफी दूर पहुंच गया तो मैं पेड़ के पास गया। मैंने ऊपर देखा तो बहुत सी कैरियां लगी थीं। मैंने पेड़ पर चढ़कर डंगालें हिलाईं। काफी कैरियां टपक गईं। मैं नीचे उतरा और अपनी बनियान निकाली और कैरियों को बनियान में रख लिया। वहां मैंने देखा कि एक पानी का मटका रखा है। मैंने उसमें देखा तो एक डब्बी दिख रही थी। मैंने लकड़ी से उठाया और उसे निकाला। उसमें नमक रखा था।

मैं बहुत खुश हुआ। मैंने बनियान को लकड़ी से बांधा। नमक की डिब्बी को जेब में रख लिया और लौटने लगा।

मैं कैरी को नमक लगाकर खाते हुए घर जा रहा था। अब तकरीबन पांच बज चुके थे। तभी मुझे रास्ते में एक खिलौना मिला। मैंने उसे रख लिया। जब मैं घर पहुंचा तो सब लोग किसी के घर कथा में गए हुए थे। जब वे वापस लौटे, तो उन्होंने मुझे प्रसाद दिया। पर ये तक नहीं पूछा कि तुम कहां थे। मैंने सोचा शहर जाने की धुन में मैंने क्या-क्या नहीं किया, पर मेरी मेहनत पर पानी फिर गया।

□ कमलेश खैरिया, नवमीं, भोपाल

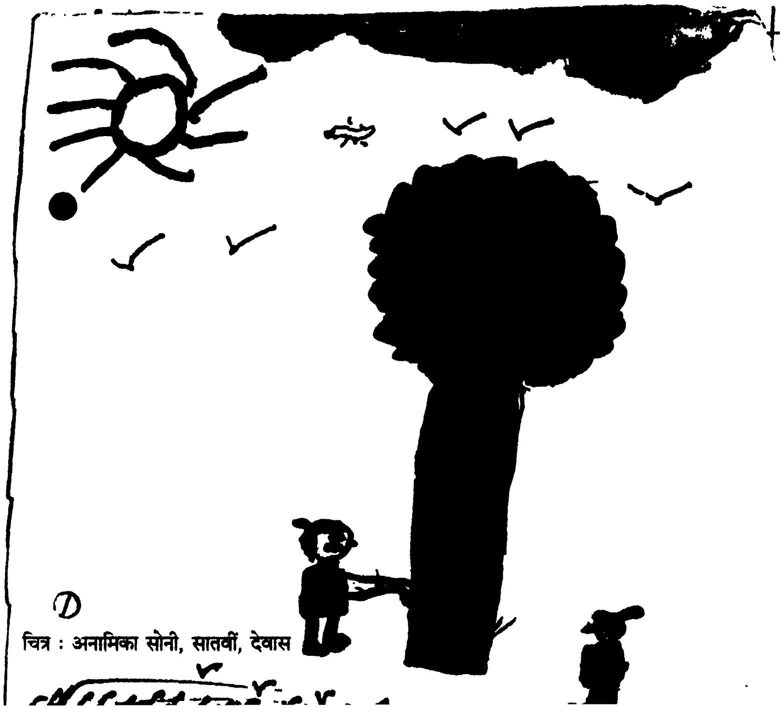

चित्र : अनामिका सोनी, सातवीं, देवास

आंख की कहानी

सोचो, तुम्हारे चेहरे पर सबसे सुंदर क्या है? निश्चित ही इसका निर्विवाद उत्तर होगा 'आंखें'! आंखों ही आंखों में न जाने क्या-क्या हो जाता है। आंखों ही आंखों में इशारे हो जाते हैं; बात-बात पर लोग आंख दिखाते हैं; खुशी में आंखें छल छला उठती हैं; क्रोध से आंखों में खून उतर आता है। वास्तव में आंखों की अपनी भाषा होती है। प्यार, नफरत, गुस्सा, हंसी जैसी तमाम भावनाएं आंखों से ही व्यक्त होती हैं, हां चेहरे के हाव-भाव उसमें मदद करते हैं।

जहां एक ओर कवियों ने आंखों के आकर्षण पर कविताएं रची हैं, गीत गाए हैं; वहीं दूसरी ओर गद्य साहित्य में कहावतें और मुहावरे भरे पड़े हैं।

चलो मैं आज तुम्हें अपने बारे में बताती हूं। हम दो बहनें हैं। दाईं और बाईं। पर काम दोनों मिलकर ही करती हैं।

लोग अक्सर मेरी तुलना कैमरे से करते हैं। यह मेरा अपमान है। कैमरा मेरे सामने क्या है? बच्चों का एक खिलौना मात्र! मैं दुनिया के सबसे बड़े, आधुनिक और महंगे कैमरे से हज़ार गुना अधिक संवेदनशील हूं। और कैमरा कभी किसी को वह दृष्टि नहीं दे सकता, जो मैं और मस्तिष्क मिलकर तुम्हें देते हैं। वास्तव में, दृष्टि एक चमत्कार ही है। हां, कैमरा एक तरह से मेरी नकल है, मगर बहुत मामूली।

आकार में मैं टेबिल टेनिस की गेंद या एक बड़े अंटे की तरह दिखती हूं और उतनी ही बड़ी हूं भी। पर इस छोटी सी रचना में करोड़ों तंत्रिकाओं का जाल फैला हुआ है जो लगभग पंद्रह लाख संदेशों का एक साथ प्रबंध करता है। तुम्हें बाहरी दुनिया के बारे में जितनी जानकारी मिलती है, उसका अस्सी प्रतिशत मुझ से ही प्राप्त होता है।

मेरे ऊपर और नीचे छह-छह मांसपेशियां होती हैं जो मुझे ऊपर-नीचे, तिरछी तथा दाएं-बाएं घुमाती हैं। मेरी एक छोटी-सी खिड़की है जिसे कॉर्निया या स्वच्छ मंडल कहते हैं। यह चवन्नी के आकार की होती है। इसी खिड़की से प्रकाश की किरणों को मोड़ने और व्यवस्थित करने की प्रक्रिया शुरू होती है। कॉर्निया के बाद एक फाटक होता है जिसे ज़रूरत के मुताबिक छोटा-बड़ा किया जा सकता। यह पुतली कहलाती है। पुतली आइरिस नामक पर्दे में फिट होती है और कैमरे के शटर की तरह प्रकाश का नियंत्रण करती है। यानी अधिक प्रकाश होने पर पुतली छोटी हो जाती है ताकि कम प्रकाश प्रवेश करे। और कम प्रकाश की स्थिति में द्वार अधिक खुलता है ताकि अधिक प्रकाश प्रवेश कर सके। पुतली की एक विशेषता और है—यह रंगीन होती है। अलग-अलग व्यक्तियों में पुतली का रंग भी अलग होता है, जैसे-काला, नीला, भूरा, हरा आदि।

पुतली से प्रवेश करने वाला प्रकाश मेरे लेंस पर पड़ता है। और लेंस तो कमाल की चीज़ है। देखने में वह अंडाकार लगता है। असल में यह एक थैली है जिसमें द्रव भरा होता है। इसके चारों तरफ, गोलाई में, छोटी-छोटी मांसपेशियों की कतार होती हैं। ये पेशियां बहुत मज़बूत होती हैं और बहुत काम भी करती हैं। पेशियां प्रतिदिन मेरी स्थिति को लगभग 1,00,000 बार बदलती हैं। यदि तुम अपनी टांगों की मांसपेशियों से इतना काम लेना चाहो तो तुम्हें कम-से-कम अस्सी किलोमीटर चलना पड़ेगा। ये पेशियां जब सिकुड़ती हैं तो लेंस अधिक गोल हो जाता है ताकि तुम पास स्थित वस्तुओं को देख सको। जब पेशियां फैलती हैं तो लेंस अधिक चपटा हो जाता है ताकि तुम दूर की वस्तुओं को देख सको।

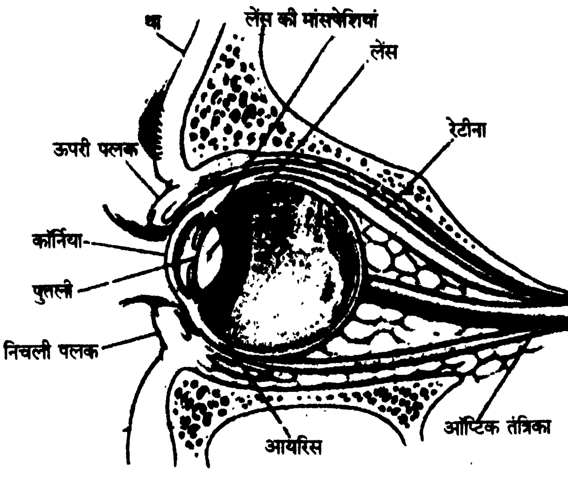

आंख की आंतरिक रचना

प्रागैतिहासिक काल में तुम्हारे पूर्वजों की आंखें ज़्यादातर 5-6 मीटर से अधिक दूरी पर स्थित चीज़ों को देखने का काम करती थीं जैसे-शत्रु जानवरों को, या अपने शिकार को। ऐसे कामों में आंख की मांसपेशियों पर कम भार पड़ता था। पर आजकल तो मुझ पर अत्याचार होता है। लोग उठते-बैठते; किताबें, अखबार, पत्रिकाएं पढ़ते रहते हैं। पढ़ने में मांसपेशियों को बहुत मेहनत करना पड़ती है। इसलिए वे जल्दी थक भी जाती हैं।

मेरे लेंस के आगे और पीछे कोष्ठ बने हैं जो द्रव से भरे रहते हैं। आगे वाला कोष्ठ छोटा होता है और उसका द्रव (नेत्रोद) पानी जैसा होता है। पीछे वाला कोष्ठ बड़ा होता है और उसका द्रव (काचाभ) अंडे के एल्बूमिन जैसा होता है। ये द्रव ही मुझे हमेशा फुग्गे जैसा फुलाकार रखते हैं। कभी-कभी कोष्ठों में द्रव सामान्य से अधिक या कम हो जाता है, तब तुम्हें काफी दर्द और दबाव महसूस होता है। दबाव बढ़ने पर आंखों में ग्लॉकोमा (सबलबाय) नामक बीमारी हो जाती है। इसमें दृष्टि धुंधला जाती है और समय पर इलाज नहीं किया जाए तो नतीजा अंधापन भी हो सकता है।

कभी-कभी तुम्हें आंखों के सामने तैरते हुए सफेद कलंक दिखते हैं। जैसे सूर्य की किरणों में नाचते हुए धूल के कण। ये कलंक या कण आंखों की उन कोशिकाओं के अवशेष हैं जो तुम्हारी भ्रूणावस्था में बनी थीं। ये कलंक ज़िंदगी भर तुम्हारी आंखों के द्रव में तैरते रहेंगे।

जब तुम किसी वस्तु को देखते हो तो प्रकाश मेरे लेंस में से होकर एक परदे पर केंद्रित होता है जिसे रेटीना कहते हैं। यह परदा प्याज की झिल्ली जैसा दिखता है और मेरे अंदरूनी कोष्ठ की दो तिहाई दीवार घेरता है। यह परदा भी बहुत विचित्र है। जितनी कोशिकाएं इस छोटे से परदे में हैं, इतनी मस्तिष्क को छोड़कर शरीर के किसी अंग में शायद ही हों। गिनती करें, तो लगभग 13.7 करोड़ कोशिकाएं रेटीना पर मौजूद हैं। ये कोशिकाएं प्रकाश के प्रति अतिसंवदेनशील हैं। ये दो किस्म की होती हैं—शलाका (छड़) कोशिकाएं और शंकु कोशिकाएं। प्रकाश, रंग, आकार आदि के बारे में तंत्रिकाओं द्वारा मस्तिष्क को संदेश भेजना और मस्तिष्क द्वारा संदेशों का निर्वचन वापस प्राप्त करना इन्हीं कोशिकाओं के जरिए होता है। वास्तव में दृष्टि की प्रक्रिया तभी पूरी होती है और हम 'देख' पाते हैं। यह प्रक्रिया क्षणों में पूरी होती है—0.002 सेकंड में। हां भई, आंखों से मस्तिष्क को संदेश लगभग 480 किलोमीटर प्रति सेकंड की रफ्तार से भेजे जाते हैं।

वैसे दोनों तरह की कोशिकाएं अलग-अलग काम करती हैं। उनके काम के बारे में एक-दो बातें। शंकु कोशिकाएं खासकर पढ़ने और रंग पहचानने जैसे कामों को करती हैं। अगर इन कोशिकाओं में कुछ गड़बड़ हो तो तुम रंग नहीं पहचान पाओगे। इसे वर्णान्धता कहते हैं। रेटिना के सबसे संवेदनशील बिंदु,पीतबिंदु पर केवल शंकु कोशिकाएं होती हैं। यह बिंदु रेटीना पर धंसी हुई रचना (फोविया) पर है। शलाका कोशिकाएं अंधेरे में देखने में मदद करती हैं। शलाका कोशिकाएं ठीक से काम कर सकें, इसके लिए विटामिन-ए की सख्त ज़रूरत होती है। यदि शरीर में विटामिन-ए की कमी हो तो हम अंधेरे में ठीक से नहीं देख पाते। यदि कमी बहुत अधिक हो तो रतौंधी की बीमारी भी हो सकती है और कभी-कभी पूर्ण अंधापन भी।

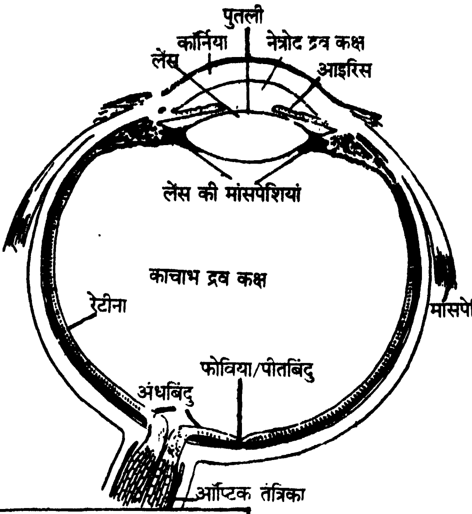

आंख की क्षैतिज काट का रेखाचित्र

अंधेपन की बात करते-करते मुझे एक और बात याद आई। रेटीना पर एक ऐसा बिंदु है जहां मस्तिष्क से आने वाली दृष्टि (या दृक्) तंत्रिका मेरे साथ जुड़ती है। इस बिंदु पर एक भी शलाका या शंकु कोशिका नहीं पाई जाती है। यदि प्रकाश इस बिंदु पर गिरता है तो मुझे कुछ पता नहीं चलता। इसीलिए इस बिंदु को अंधबिंदु कहा जाता है।

यह सही है कि तुम मेरे द्वारा देखते हो, परंतु वास्तव में मस्तिष्क ही तुम्हें 'दृष्टि' देता है। मस्तिष्क में दृष्टि का केंद्र सिर के पीछे की तरफ स्थित है। यदि कभी कोई गलती से सिर के पीछे मारे तो तुम्हें दिन में तारे दिखाई पड़ने लगते हैं। यदि मार या चोट ज़ोर की हो तो यह केंद्र क्षतिग्रस्त हो सकता है और दृष्टि भी जा सकती है।

दृष्टि में मस्तिष्क की भूमिका का सबसे अच्छा प्रमाण है सपने। हम सपनों में भी चित्र 'देखते' हैं, यानी आंख बंद होने पर भी हम 'देख' सकते हैं। यदि कोई बचपन से ही अंधा

हो तो शायद उसके सपनों में चित्र किसी दूसरी इंद्री-जैसे स्पर्श, पर आधारित होंगे!

जब बच्चे का जन्म होता है, तब मैं इतनी विकसित नहीं होती हूं जितनी वयस्क होने पर। जन्म पर मैं केवल प्रकाश और छाया में अंतर कर पाती हूं। शुरूआत के कुछ महीनों में मैं दूर स्थित चीज़ों को ज़्यादा आसानी से देख पाती हूं। मान लो मां अपने बच्चे को कोई खिलौना देती है तो उसको पहचानने के लिए आंखों के पास नहीं बल्कि लगभग हाथ भर की दूरी पर रखना बेहतर होगा।

एक और बात। बचपन में हम दोनों बहनों में ठीक से तालमेल नहीं बैठता था। यानी, हम दोनों के काम में समन्वय की कमी थी। मैं यदि एक चीज़ को ध्यान से देख रही होती तो मेरी बहन किसी दूसरी चीज़ को देखती। आमतौर पर इसे आंखों का जमना कहा जाता है। कई बार कुछ माता-पिता बहुत चिंतित हो जाते हैं कि कहीं बच्चे की आंख में कोई गड़बड़ तो नहीं है। यदि उन्हें मालूम होता कि हम दोनों कुछ महीनों बाद समन्वयित काम करने लगेंगी, तो चिंता करने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती। छह साल की उम्र तक पहुंचते-पहुंचते दृष्टि एकदम बढ़िया हो जाती है और आठ साल के अंदर मेरा विकास लगभग पूर्ण हो जाता है।

कुछ बच्चे कम प्रकाश में पढ़ते हैं। उनकी मां उन्हें डांटती हैं कि आंखें खराब हो जाएंगी। परंतु ऐसा कभी नहीं होता, क्योंकि बच्चे अंधेरे में वयस्कों से बेहतर देख पाते हैं।

अब चलें साफ-सफाई की बातों पर। जैसे तुम अपने घर की सफाई करते रहते हो या उसका ध्यान रखते हो, वैसे ही मुझमें भी सफाई की पूरी व्यवस्था है। गंदगी में कोई नहीं रहना चाहता, मैं भी नहीं। मेरी पलक का यही काम है, वह कॉर्निया को हमेशा पोंछती रहती है। इसकी तुलना तुम ट्रक के वाइपर से भी कर सकते हो। बारिश में वाइपर लगातार सामने का शीशा साफ करते रहता है। एक मिनट में तुम कम से कम 3 से 6 बार अपनी पलक झपकाते हो। इससे कॉर्निया न केवल साफ रहता है बल्कि नम भी। यह नमी मेरे अंदर स्थित अश्रु ग्रंथि के कारण रहती है। आंसू न केवल सुख-दुख का आभास देने के लिए बहते हैं बल्कि सफाई भी करते हैं। आंसुओं में एक रोगाणु नाशक पदार्थ भी होता है जो हानिकारक सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर देता है। यह तो तुम जानते ही हो कि आंसू खारे होते हैं। कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि खारे आंसू इस बात का प्रमाण हैं कि जीवों की उत्पत्ति समुद्र से हुई है। वैसे हमारे रक्त में भी खारापन होता है। वह भी यही सिद्ध करता है।

प्राचीन काल से ही यह धारणा रही है कि दूसरे की आंखों में बहुत कुछ पढ़ा जा सकता है। कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार, यह केवल कल्पना नहीं है। जब हम अपने किसी प्रिय की आंखों में देखते हैं तो हमारी आंखों की पुतली अधिक फैलती या खुलती है। इसके विपरीत किसी अप्रिय या शत्रु की आंखों में देखें तो हमारी पुतली सिकुड़ती है या छोटी होती है। इस प्रतिक्रिया पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है। इसलिए, लोग चाहे अपने हाव भाव और आवाज़ पर कितना ही नियंत्रण करें, असलियत आंखों में झलकती है।

देखते, पढ़ते, निहारते मैं थक जाती हूं। थकावट की स्थिति में तुम्हारी आंखें झपकने लगती हैं जिससे मुझे थोड़ा-बहुत आराम मिलता है। परंतु आराम करने का मेरा अपना तरीका भी है। हम दोनों बहनें देखने के काम को आपस में बांट लेती हैं। जब एक आंख किसी वस्तु पर ध्यान केंद्रित करती है तो दूसरी आंख आराम करती है।

कवियों ने मुझे कटारी, तीखी, छुरी जैसी उपमाएं दी हैं, पर वास्तव में मैं बहुत कोमल हूं। इसलिए मेरी रक्षा करना ज़रूरी है। प्राकृतिक रूप से सुरक्षा की पूरी व्यवस्था बनी बनाई है। जैसे माथा और गाल की हड्डियां। चेहरे पर भी मैं कोटर में स्थित होती हैं। आंख में कचरा, धूल, रेत आदि के कण घुस जाने पर मेरी संवेदनशील तंत्रिकाएं मस्तिष्क में खतरे की जंजीर खींच देती हैं। अश्रु ग्रंथि से तुरंत आंसू बहने लगते हैं जो कण आदि को बहाकर बाहर निकाल देते हैं।

फिर भी मुझे कई ऐसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिनका समाधान मैं अपने आप नहीं कर पाती। कभी-कभी मेरी फोकसन व्यवस्था में गड़बड़ हो जाती है। इस गड़बड़ी को दूर करने के लिए चश्मा पहनना होता है। कभी-कभी मेरा कॉर्निया एकदम गोल न होकर कुछ विकृत हो जाता है जिससे दृष्टि में भी विकृति आ जाती है। इस दशा को अबिंदुकता (एस्टिगमेटिसम) कहते हैं। इसका निदान यह है कि गोल लेंस का चश्मा पहनो। इससे भी गंभीर एक समस्या है जिसमें मेरे रेटीना पर फफोले पड़ जाते हैं। इससे रेटीना छिलने लगता है और इसका इलाज है—ऑपरेशन। कभी-कभी मेरा कॉर्निया या लेंस धुंधला पड़ जाता है या दूधिया-सा हो जाता है। अगर यह दोष कॉर्निया में है तो उसे बदलने के सिवाय कोई रास्ता नहीं। यानी किसी और आंख का कॉर्निया निकालकर प्रतिरोपित कर दिया जाता है। यदि दोष लेंस में है तो मोतियाबिंदु हो सकता है और इसे दूर करने के लिए ऑपरेशन करना होता है। ऑपरेशन के बाद भी मरीज को बहुत मोटा चश्मा पहनना पड़ता है।

शरीर के साथ-साथ मैं भी बूढ़ी होती जाती हूं। अधिक उम्र होने पर लेंस की पारदर्शिता घट जाएगी;

(शेष पृष्ठ 24 पर)

अपनी बुद्धि का मार्ग

अपने नगर के और अनेक बच्चों की तरह चारवाक जब बारह वर्ष का हुआ तो उसे भी एक विद्वान गुरू के आश्रम में पढ़ने के लिए भेज दिया गया। वह जाकर गुरू के आश्रम में रहने लगा। वह भी अन्य छात्रों की तरह गुरू की बड़ी सेवा करता था और गुरूजी जो शिक्षा देते थे—उसे बड़े ध्यान से सुनता था। चारवाक बड़ी प्रखर बुद्धि का था इसलिए उसे हर बात सुनते ही याद हो जाती थी। गुरूजी उसकी इस बात से बहुत प्रसन्न थे। चारवाक भी गुरू के स्नेहपूर्ण व्यवहार और आश्रम के वातावरण से बहुत प्रसन्न था।··· पर वह चुप बहुत रहता था। न तो वह गुरु को कोई जवाब देता था और न ही उनसे कोई प्रश्न करता था। बल्कि वह गुरूजी की हर बात पर मन ही मन सोचता रहता था। गुरूज़ी बताते, 'आत्मा, रूप, रंग, आकार, प्रकार कुछ नहीं होता।' वह सोचता, 'ऐसी कोई वस्तु कैसे हो सकती है?' गुरूजी बताते, 'परमात्मा का ध्यान करना धर्म है। उससे मोक्ष की प्राप्ति होती है।···' तो चारवाक सोचता, 'जो कुछ नहीं है उसका ध्यान धर्म कैसे हो सकता है?' वह अपने संगी साथियों से कभी ऐसी बातें करता तो वह उसकी हंसी उड़ाते थे।

चारवाक को इस प्रकार आश्रम में रहते हुए कई वर्ष बीत गए तो एक दिन गुरूजी ने कहा, "चारवाक, मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं। अब तुम मुझसे दीक्षित होकर अपने घर जा सकते हो।··· पर तुम क्योंकि चुप बहुत रहते थे··· तुमने कभी मुझसे कोई प्रश्न नहीं किया इसलिए मैं तुम्हारी परीक्षा लूंगा और देखूंगा कि मैंने जो पढ़ाया है, वह तुमने समझ लिया या नहीं।··· मैं जो पूछूं, उसका तुम अपनी समझ से ठीक ठीक उत्तर देना। चारवाक परीक्षा के लिए तैयार हो गया। गुरू ने उससे कहा, "बताओ आत्मा क्या होती है?"

चारवाक ने सोचा, 'गुरूजी ने कहा है कि मैं अपनी समझ से ठीक उत्तर दूं।' उसने कहा, "आत्मा कुछ नहीं

गुरूजी सुनकर आवाक रह गए। उन्होंने सोचा, "मैंने तो इसे बताया था कि आत्मा परमात्मा का अंश होती है।" उन्होंने दूसरा प्रश्न किया, "परमात्मा किसे कहते हैं?"

चारवाक ने कहा, "वह भी कुछ नहीं है।"

गुरू, "धर्म किसे कहते हैं?"

चारवाक, "अपने शरीर को स्वस्थ रखना ही धर्म है।"

गुरू, "पुनर्जन्म होता है या नहीं?"

चारवाक, "नहीं।"

गुरू, "मोक्ष कैसे प्राप्त होता है?"

चारवाक, "सत्य का ज्ञान प्राप्त करने और सच बोलने

गुरू, "परलोक किसे कहते हैं?"

चारवाक, "इस लोक से अलग कोई और लोक नहीं है।

गुरू, "मृत्यु के बाद मनुष्य कहां जाता है?"

चारवाक, "कहीं नहीं। वह पंच तत्त्वों में विलीन हो जाता है।"

गुरूजी सुनते-सुनते अपना धैर्य खो चुके थे। झल्ला कर बोले, "चारवाक! तुमने इतने वर्ष आश्रम में रहकर अपना और मेरा समय व्यर्थ नष्ट किया। मैं तुम्हें दीक्षित नहीं कर सकता। अब तुम अपने घर जा सकते हो।"

चारवाक, 'जो आज्ञा गुरूजी' कहकर शीश झुकाए आश्रम छोड़ कर चल दिया। पर वह सोच रहा था, 'मैंने कुछ असत्य तो कहा नहीं, फिर गुरूजी ने मुझे दीक्षित क्यों नहीं किया?··· अब मैं बिना दीक्षित हुए घर जाऊंगा तो वहां भी मेरी हंसी होगी।' यह सोचकर वह देश भ्रमण के लिए निकल पड़ा। घूमते-फिरते उसे कोई कुछ खाने को दे देता तो वह खा लेता था। भूख लगने पर मांग कर खाने में भी उसे कोई

संकोच नहीं था। कभी जब उसे मांगने से भी कुछ नहीं मिलता तो झूठ बोलकर किसी से कुछ ले लेने को भी वह बुरा नहीं समझता था।

घूमते फिरते साधु सन्यासियों के बीच में बैठकर वह ऐसी बातें करता था जो उनकी समझ में नहीं आती थीं। तब वह उनका साथ छोड़कर चल देता था।... लेकिन वह उनसे कुछ ऐसी बातें कह जाता था जिन पर वह सोचते रहने के लिए विवश हो जाते थे।... और कभी-कभी उन्हें ऐसा लगता कि शायद चारवाक ने ठीक ही कहा था।

एक बार चारवाक एक महानगर के बीच एक मार्ग पर अकेला चला जा रहा था कि उसने देखा-मार्ग के एक ओर कुछ पशु बंधे थे, जिनके माथे पर तिलक लगा था। उसके पास भूमि को लीप पोत कर सजाया जा रहा था। कुछ लोग आस पास खड़े थे। ऐसा लगता था जैसे वहां कोई उत्सव होने वाला हो।

चारवाक ने वहां रुक कर पूछा, "यहां क्या हो रहा है?"

लोगों ने कहा, "देखते नहीं, यज्ञ होने वाला है।"

चारवाक ने पूछा, "यह पशु यहां क्यों बंधे हैं?"

लोगों ने कहा, "जानते नहीं, इनकी बलि दी जाएगी।"

चारवाक, "बलि क्यों दी जाएगी?"

एक ने कहा, "बलि से देवता प्रसन्न होता है।"

चारवाक, "किसी ने देवता को प्रसन्न होते देखा है?"

सब अवाक उसका मुंह देखने लगे। तभी चारवाक ने कहा, "देवता कोई है ही नहीं। हो भी तो उसे प्रसन्न नहीं किया जा सकता।... और यदि उसे प्रसन्न कर भी लिया जाए तो वह किसी को कुछ दे नहीं सकता।"

तभी उनमें से कुछ लोग चारवाक को मारने के लिए झपटे। चारवाक वहां से भागा। उनमें से कुछ लोग उसके पीछे भागने लगे। चारवाक भागता ही चला गया और वह लोग उसके पीछे-पीछे भागते रहे। कुछ दूर जाकर उन लोगों ने कहा, "ठहरो, ठहरो। हम तुम्हारी बात सुनना चाहते हैं।"

चारवाक ठहर गया। उन लोगों ने कहा, "हमें तुम्हारी बात ठीक मालूम होती है। हम तुम्हें अपना गुरू बनाना चाहते हैं।"

चारवाक ने कहा, "शिष्य मैं किसी को नहीं बनाता। तुम को स्वयं अपनी बुद्धि के बताए मार्ग पर चलना चाहिए न कि किसी और के बताए मार्ग पर।"

☐ **निरंकार देव सेवक**

रिमझिम रिमझिम

गांव-गांव में, नगर-नगर में,
वन-बागों में, डगर-डगर में,
क्या पर्वत पर, क्या जल-थल में,
भू पर, नभ पर, शहर-शहर में—

जल के बिना न कोई तरसा ।
रिमझिम-रिमझिम पानी बरसा ।।

भरे समुंदर, ताल-तलैया,
उमड़ी-उछली नद्दी-नैया ।
हरी-हरी झूमी लतिकाएं
मंद-मंद डोले पुरवैया ।

घन ने जी भर पानी परसा ।
रिमझिम-रिमझिम पानी बरसा ।।

मोर नाचते, मेंढक गाते,
भौंरे फूलों पर मंडराते,
तितली हंसती, कोयल गाती,
खेतों में हल, कृषक चलाते ।

जन-जन का मन सुख से हरषा ।
रिमझिम-रिमझिम पानी बरसा ।।

पानी बरसा

आंगन में है फैली काई
देखो, संभलो, फिसले भाई!
भीगी धोती, भीगा कुरता,
मुंह लटकाए आफत आई—

भागे, छोड़ा तुरत मदरसा।
रिमझिम-रिमझिम पानी बरसा।।

दैया दैया, मेरी गैया—
भीगी, टूटी-खाट मड़ैया।
आंधी आई, बिजली चमकी,
घन गरजे, घर भागे भैया।

पत्थर का भी तन-मन सरसा।
रिमझिम-रिमझिम पानी बरसा।।

छुट्टी आज ज़रूर मनाओ,
कागज़ की तुम नाव चलाओ,
दौड़ बाग में झूला झूलो,
उछलो, कूदो, खूब नहाओ।

प्रेम-भाव आपस में दरसा।
रिमझिम-रिमझिम पानी बरसा।।

□ अवधेश श्रीवास्तव

('बालसखा' से साभार)

चित्र : विवेक

आंख के साथ कुछ प्रयोग

इस अंक में 'आंख की कहानी' भी प्रकाशित हुई है। क्यों न लगे हाथ आंख की प्रक्रिया से संबंधित कुछ और बातें प्रयोगों के माध्यम से कर ली जाएं। ये बातें, आंखों में प्रकाश की किरणों के पथ; आंख, मस्तिष्क और शरीर के अन्य अंगों के बीच समन्वय; त्रिविम दृष्टि तथा दृष्टि भ्रम से संबंधित हैं।

कभी तुमने लेंस की मदद से कागज़ जलाने की कोशिश की है? इस प्रक्रिया में सूर्य की समांतर किरणें लेंस से परावर्तित होकर एक बिंदु पर केंद्रित होती हैं। यह बिंदु वास्तव में सूर्य का प्रतिबिंब है। कागज़ इसलिए जलता है क्योंकि किरणों की ताप ऊर्जा भी उसी बिंदु पर केंद्रित होती है। ऐसा लेंस, जो परावर्तन में किरणों को अभिसरित करता है, उभयोत्तल लेंस कहलाता है और उसका केंद्र, फोकस बिंदु। यह लेंस दो उत्तल लेंसों के जोड़ से बनता है।

एक अन्य किस्म का लेंस भी होता है जो परावर्तित किरणों को अपसारित करता है। इस लेंस को उभयावतल लेंस कहते हैं। यह दो अवतल लेंसों के जोड़ से बनता है। यहां दोनों तरह के लेंसों के चित्र दिए हैं और उनमें दो समांतर किरणों का पथ भी दर्शाया गया है।

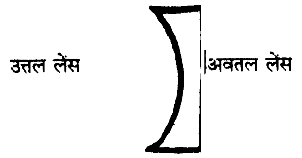

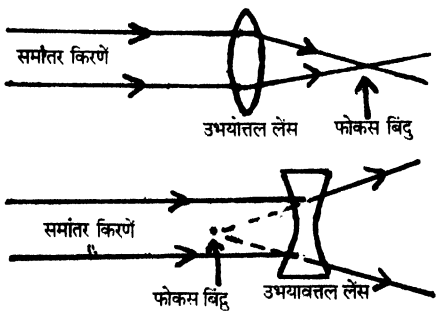

हमारी आंखों का लेंस उभयोत्तल लेंस है। पर उसमें और कागज़ जलाने वाले लेंस में एक महत्वपूर्ण अंतर है। कागज़ जलाने वाला लेंस कांच का बना होता है इसलिए उसका एक स्थायी आकार है। फलस्वरूप, उसका फोकस बिंदु भी एक ही होता है। जबकि आंख का लेंस द्रव से भरी एक थैली है जिसका आकार आवश्यकतानुसार बदलता रहता है। कभी वह अधिक गोल होता है और कभी अधिक चपटा। इसलिए उसका स्थायी आकार नहीं होता है और फोकस बिंदु भी स्थिति अनुसार बदलता रहता है। **आंख की कहानी** में तुमने पढ़ा होगा कि अधिक गोलाई पास स्थित वस्तुओं को देखने के लिए है और कम गोलाई दूर की वस्तुओं को देखने के लिए। गोलाई जितनी अधिक होगी, लेंस से फोकस बिंदु की दूरी उतनी ही कम होगी।

किसी भी वस्तु को देखने के लिए यह ज़रूरी है कि उसका प्रतिबिंब आंख में बने। एक पेंसिल का प्रतिबिंब बनने की प्रक्रिया चित्र में दर्शाई है। वैसे तो पेंसिल की सतह के हर बिंदु से प्रकाश की किरणें आंखों पर पड़ती हैं, परंतु सरलता के लिए यहां केवल दो किरणें दिखाई गई हैं—एक पेंसिल की नोक से और दूसरी उसके आधार से। चित्र में तुम देख सकते हो कि किरणें लेंस से परावर्तित होकर एक बिंदु पर मिलती हैं और फिर अपसारित होती हैं। प्रतिबिंब रेटीना पर बनता है, परंतु वह पलटा हुआ होता है। पर हमें पेंसिल पलटी हुई नहीं दिखाई देती, क्यों? इसलिए, क्योंकि मस्तिष्क उसको सीधा करके **दिखाता** है। आंख और मस्तिष्क के बीच की संचार व्यवस्था तंत्रिकाओं पर आधारित है। संचार का तरीका टी.वी. चित्रों के प्रसारण के तरीके से कुछ मिलता-जुलता है। यानी आंख पर पड़ने वाली प्रकाश की किरणें कई जटिल क्रियाओं के माध्यम से विद्युत आवेगों में बदल जाती हैं। ये आवेग तंत्रिकाओं द्वारा मस्तिष्क तक पहुंचते हैं। जहां उनका मूल्यांकन और निर्वचन होता है। निर्वचित जानकारी के आधार पर ही हमें पेंसिल दिखती है। और वह भी उसकी वास्तविक स्थिति में, पलटी हुई नहीं।

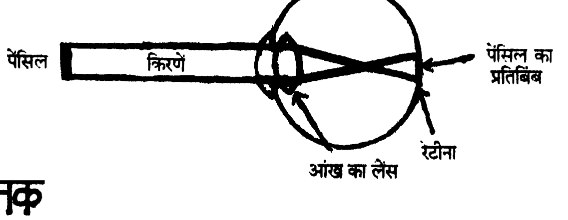

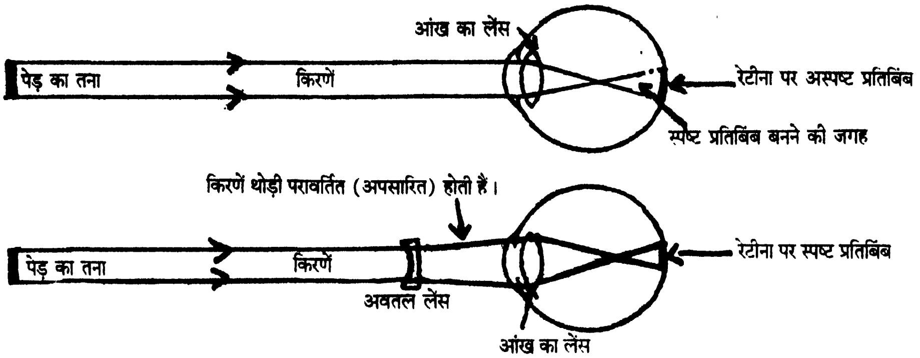

तुमने यह भी पढ़ा होगा कि दृष्टि की गड़बड़ी को सुधारने के लिए चश्मा पहनना होता है। चश्मा गड़बड़ी को किस तरह दूर करता है? आओ देखते हैं।

जैसा कि तुमने पढ़ा, आंख एक गोला है जिसकी पिछली दीवार के भीतरी ओर रेटीना नामक संवेदनशील परदा है। इस परदे पर ही प्रतिबिंब बनता है। लेंस, कम या ज़्यादा गोल होकर दूर या पास स्थित वस्तुओं का प्रतिबिंब रेटीना पर फोकस करता है। आंख की गोलाई में विकृति होने के कारण यह प्रक्रिया ठीक से नहीं हो पाती है।

विकृति दो प्रकार की हो सकती है। एक; आंख इस तरह दबी रहती है कि रेटीना, लेंस से आवश्यकता से अधिक दूरी पर होता है। इस स्थिति में दूर स्थित वस्तुओं को ठीक से नहीं देखा जा सकता। लेंस तो वस्तु को देखने के लिए आवश्यकतानुसार अधिक चपटा हो जाता है, परंतु रेटीना दूर होने के कारण प्रतिबिंब उसके सामने फोकस पर आता है। इससे रेटीना पर जो प्रतिबिंब बनता है वह अस्पष्ट होता है। यह दोष निकट दृष्टि दोष (मयोपिया) कहलाता है। इसको सुधारने के लिए अवतल लेंस के चश्मे का प्रयोग किया जाता है। यह लेंस किरणों को थोड़ा अपसारित करके प्रतिबिंब को रेटीना पर बनाने में आंख के लेंस की मदद करता है। नीचे दिए चित्र देखो।

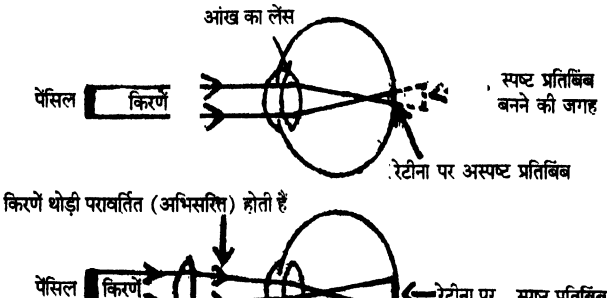

दूसरी तरह की विकृति में आंख इस तरह दबी रहती है कि रेटीना लेंस के बहुत पास रहता है। इससे पास स्थित वस्तुओं को देखते समय लेंस गोल तो हो जाता है परंतु प्रतिबिंब रेटीना के पीछे ही फोकस होता है। इस स्थिति में भी रेटीना पर बना प्रतिबिंब अस्पष्ट होता है। इस दोष को दूर दृष्टि दोष (हाइपरमेट्रोपिया) कहते हैं। इस विकृति के कारण पास स्थित वस्तुओं को ठीक से नहीं देखा जा सकता। इस दोष को दूर करने के लिए उत्तल लेंस के चश्मे का उपयोग किया जाता है। यह लेंस किरणों को थोड़ा अभिसरित करके प्रतिबिंब को रेटीना पर बनाने में आंख के लेंस की मदद करता है। ऊपर दिए चित्र देखो।

एक और स्थिति होती है जब आंख तो सही आकार की होती है पर लेंस ठीक से गोल नहीं हो पाता है। यह शिकायत वृद्धावस्था में होती है जब मांसपेशियां ठीक से काम नहीं कर पाती हैं और लेंस का लचीलापन भी कम हो जाता है। इस स्थिति में पास वाली वस्तुएं अस्पष्ट सी दिखती हैं। इस दोष को अल्प दूर दृष्टि दोष (प्रेस बयोपिया) कहते हैं।

अब हम आंख, मस्तिष्क और अन्य अंगों के समन्वय की कुछ बातें करेंगे। इस संदर्भ में तुमने पिछले अंक में एक उदाहरण (पृष्ठ 19) पढ़ा होगा। जिसमें खतरे की स्थिति में आंख, मस्तिष्क और टांगों की मांसपेशियों के समन्वय का ज़िक्र था। यहां आंख, मस्तिष्क और हाथ के बीच समन्वय का एक प्रयोग करो।

एक पोस्टकार्ड को अपने बाएं हाथ में पकड़ो और दायां हाथ उसके नीचे रखो। अब कार्ड को गिराओ और गिरते कार्ड को दाएं हाथ से पकड़ लो। आसान है न!

अब यही प्रयोग अपने दोस्त के साथ दोहराओ। इस बार तुम अपने बाएं हाथ से कार्ड ऊपर से छोड़ो और दोस्त से कहो कि वह गिरते हुए कार्ड को अपने दाएं हाथ से पकड़े। दोस्त ऐसा नहीं कर पाएगा। दो-तीन बार कोशिश करने पर भी वह शायद असफल रहेगा। क्यों?

पहली स्थिति में तुम्हारे दोनों हाथ और मस्तिष्क के बीच समन्वय का मामला है। तुम कार्ड को इसलिए पकड़ पाते हो क्योंकि तुम्हारा मस्तिष्क तुम्हारे दोनों हाथों को **छोड़ो** और **पकड़ो** के संकेत एक साथ भेजता है। पर जब तुम्हारा दोस्त उसे पकड़ने की कोशिश करता है तो समन्वय की कड़ी में आंख भी जुड़ जाती है। पहले उसकी आंख उसके मस्तिष्क को संदेशा भेजती है कि कार्ड गिरा है, तब उसका मस्तिष्क हाथ को **पकड़ो** का संकेत भेजता है। इस पूरी प्रक्रिया में थोड़ा अधिक समय लगता है इसलिए दोस्त समय पर कार्ड नहीं पकड़ पाता।

तीन या चार साल का बच्चा जब लिखना सीखना शुरू करता है तो उसे बहुत परेशानी होती है। क्योंकि उसके हाथों व मस्तिष्क के समन्वय और प्रतिवर्त (रिफ्लेक्स) इतने विकसित नहीं होते हैं। उस बच्चे की परेशानी का अहसास तुम एक प्रयोग से कर सकते हो।

इस पन्ने को मेज़ पर एक दर्पण को सामने इस तरह रखो कि यहां का चित्र दर्पण में प्रतिबिंबित हो। अब अपनी बाईं हथेली को आंखों के सामने इस तरह रखो कि तुम्हें चित्र नहीं दिखे, पर दर्पण में प्रतिबिंब दिखे। अब दाएं हाथ में पेंसिल पकड़कर उसकी नोक **शुरू** बिंदु पर रखो। दर्पण में देखते हुए **शुरू** से **अंत** तक बने पथ की सीमाओं के भीतर पेंसिल से लकीर खींचने की कोशिश करो। आसान नहीं है, न! क्योंकि तुम्हारा प्रतिवर्त भी पल्टे हुए (उत्क्रमित) प्रतिबिंब के आधार पर ठीक से काम नहीं कर पाता है। बस, बच्चे की भी यही समस्या है।

अपने एक हाथ को आगे की तरफ सीधा तानकर उसकी एक उंगली खड़ी करो। अब एक आंख बंद करो और दूसरी आंख से उंगली की सीध में दूर का कोई दृश्य देखो। यही प्रक्रिया दूसरी आंख बंद करके एवं पहली आंख खोलकर दोहराओ। उंगली और सिर को बिलकुल मत हिलाना। क्या तुम्हें दोनों बार उंगली की सीध में एक ही दृश्य दिखाई दिया? नहीं न! सोचो ऐसा क्यों? दृश्य क्यों बदल गया?

गेंद के चित्र ऐसे बनाओ

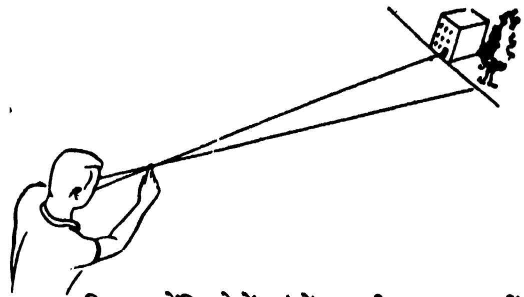

इसलिए, क्योंकि दोनों आंखें एक ही स्थान पर नहीं हैं, वे हमारे चेहरे पर एक दूसरे से थोड़े अंतर पर स्थित हैं। वास्तव में दोनों आंखें किसी भी दृश्य के भिन्न-भिन्न हिस्सों पर केंद्रित होती हैं। हमारा मस्तिष्क दोनों आंखों के अलग-अलग प्रतिबिंबों को जोड़कर दृश्य का एक संपूर्ण प्रतिबिंब बनाता है। आंखों के प्रतिबिंबों के इस आधार पर ही मस्तिष्क दृश्य के विभिन्न पहलुओं की दूरी और घनता तय कर पाता है। ऐसे देखने की प्रक्रिया को त्रिविमि दृष्टि कहते हैं।

इस बात को और स्पष्ट करने के लिए एक और प्रयोग करो। अपने दोनों हाथों को आगे की तरफ सीधा तानो। एक में पेन पकड़ो और दूसरे में उसका ढक्कन। अब पेन पर ढक्कन लगाने की कोशिश करो। आसान है, न! अब एक आंख बंद करके ढक्कन लगाने की कोशिश करो। ढक्कन आसानी से पेन पर नहीं लगा पाते न! यही प्रक्रिया दूसरी आंख बंद करके दोहराओ। फिर भी नहीं लगा पाते न! पर जब दोनों आंखें खुली हैं तो कोई दिक्कत नहीं होती।

अब देखें, दृष्टि भ्रम के कुछ उदाहरण। पिछले अंक में भी कुछ उदाहरण दिए थे जो आंख की बनावट तथा काम करने के तरीके पर आधारित थे। यानी इन भ्रमों के पीछे कुछ स्पष्ट प्राकृतिक या शरीर क्रियात्मक कारण थे। हम यहां ऐसे कुछ और उदाहरण देंगे और साथ में ऐसे भ्रमों की चर्चा भी करेंगे जो मनोवैज्ञानिक कारणों से उत्पन्न होते हैं।

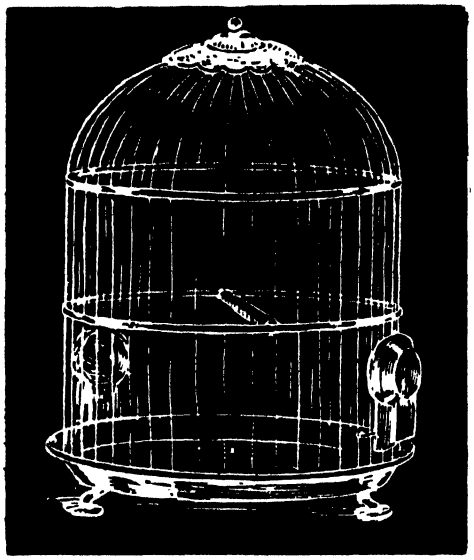

यह प्रयोग चकमक में पहले भी छप चुका है, पर इस संदर्भ में इसे दोहराना उचित होगा। चित्र में बताए कार्ड के एक तरफ तोते का चित्र है और पीछे की तरफ पिंजरे का। यदि हम इस कार्ड को एक लकड़ी या आलपिन के सहारे तेज़ी से घुमाते हैं तो ऐसा लगता है कि तोता पिंजरे में बैठा है। कुछ ऐसी ही क्रिया सिनेमा देखते समय होती है। सिनेमा की रील अनेक छोटे-छोटे चित्रों को जोड़कर बनाई जाती है। जब ये छोटे-छोटे चित्र तेजी से एक-के-बाद-एक परदे पर दिखाए जाते हैं तो हमें लगता है कि परदे पर एक ही चित्र में घटनाएं घट रही हैं। ऐसा भी लगता है कि चित्रों में गति है जबकि प्रत्येक चित्र में स्थिर दृश्य ही होता है।

यदि इस प्रक्रिया को समझना है, तो एक प्रयोग करो। कागज़ के छोटे टुकड़ों पर चित्रानुसार एक गेंद का चित्र बनाओ। इन टुकड़ों को उसी क्रम में एक साथ जमाओ। अब इन टुकड़ों की गड्डी को एक सिरे से एक हाथ में पकड़ो और दूसरे सिरे पर दूसरे हाथ के अंगूठे से गड्डी के पन्नों को तेज़ी से छोड़ो। तुमको लगेगा कि गेंद गतिशील है, जबकि प्रत्येक पन्ने पर स्थिर गेंद का चित्र है।

यह भ्रम इसलिए होता है क्योंकि किसी भी चित्र को देखने में समय लगता है। रेटीना पर से उसका प्रतिबिंब मिटने के पहले यदि दूसरा चित्र दिखाया जाता है तो दोनों चित्र आपस में मिल जाते हैं। इस घटना को दृष्टि निर्बन्ध कहते हैं।

अब देखें मनोवैज्ञानिक दृष्टि भ्रम के कुछ उदाहरण। असल में हमारी आंखें हमें कुछ ही स्थितियों में धोखा देती हैं! अन्यथा वे किसी भी दृश्य का सही प्रतिबिंब देती हैं। धोखा अक्सर मस्तिष्क में होता है जहां आंखों के अवलोकनों का मूल्यांकन और निर्वचन होता है। भ्रम इसलिए उत्पन्न होता है क्योंकि मस्तिष्क अनजाने में (अचेत) दृश्य में कुछ जोड़ता या घटाता है। कुछ उदाहरण देखो।

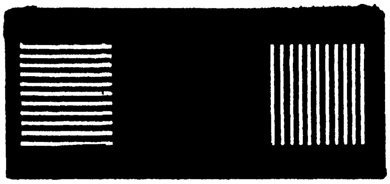

इस चित्र में सीधी रेखाओं से बने दो आकार हैं। बायां आकार दाएं आकार से अधिक संकरा लगता है, जबकि दोनों समान चौकोर हैं। हमें ऐसा इसलिए लगता है क्योंकि बाएं आकार की ऊंचाई का अंदाज लगाते समय हम अनजाने में रेखाओं के बीच की दूरियां (रिक्त स्थान) भी जोड़ते हैं। इसलिए चौड़ाई कम प्रतीत होती है। इसी अचेत मूल्यांकन के कारण दाईं आकृति की चौड़ाई, ऊंचाई से अधिक लगती है।

(शेष पृष्ठ 33 पर)

गेंद के चित्र ऐसे बनाओ

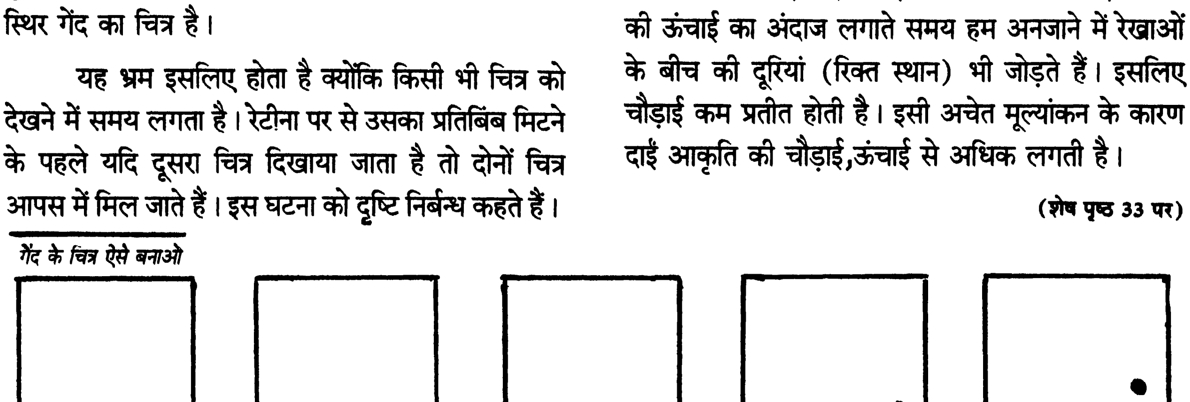

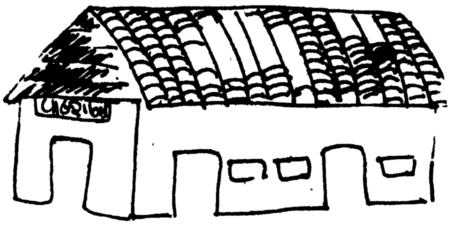

इस अंक से हम इस पुस्तक का रूपांतरण एक धारावाहिक के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। रूपांतरण में अपने देश की परिस्थिति को मद्देनज़र रखने की कोशिश की है। तो लो, सावधानी से आगे बढ़ो क्योंकि आगे है :

खतरा : स्कूल!

आजकल शिक्षा के बारे में बहुत कुछ कहा-सुना जा रहा है। नई शिक्षा नीति, आपरेशन ब्लैक बोर्ड वगैरा-वगैरा से माहौल गरमागरम है। ऐसा लगता है जैसे आज़ादी के चालीस साल बाद एकाएक शिक्षा में क्रांति होने वाली है।

शिक्षा व्यवस्था का आधार है - स्कूल। आमतौर पर सोचा जाता है कि अच्छे स्कूल जैसे कॉन्वेंट, अंग्रेजी मीडियम स्कूल, नवोदय स्कूल इत्यादि जब फैलेंगे तो शिक्षा का स्तर सुधर जाएगा और खुशहाली ही खुशहाली फैल जाएगी। यह सोच कितना सही या गलत है? क्या स्कूल को समाज की अन्य व्यवस्थाओं से हट के या काट के देखा जा सकता है? ऐसा क्यों है कि संपन्न परिवारों के बच्चे ही अच्छी शिक्षा पा कर अच्छी नौकरियां हासिल करते हैं। दूसरी तरफ कामगार व किसानों के बच्चे या तो शिक्षा से ही दूर हो जाते हैं या फिर उन्हें घटिया किस्म की शिक्षा मिलती है, जिससे उनका भविष्य भी एक तरह से तय ही हो जाता है। ये सब गंभीर और विचारणीय मुद्दे हैं।

जिनेवा (स्विटज़रलैंड) स्थित 'इंस्टीटयूट फॉर कल्चरल एक्शन' ने कई वर्ष पहले एक रोचक पुस्तक 'खतरा : स्कूल' प्रकाशित की थी। इस पुस्तक में स्कूली व्यवस्था का विश्लेषण चित्रों और सामान्य भाषा के माध्यम से किया गया है।

शुभ मुहूर्त देखकर एक दिन
बैंड बाजे के साथ .....

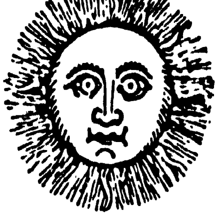

मंत्री जी और अधिकारियों
की उपस्थिति में

एक नए स्कूल का उद्घाटन हो रहा है .....

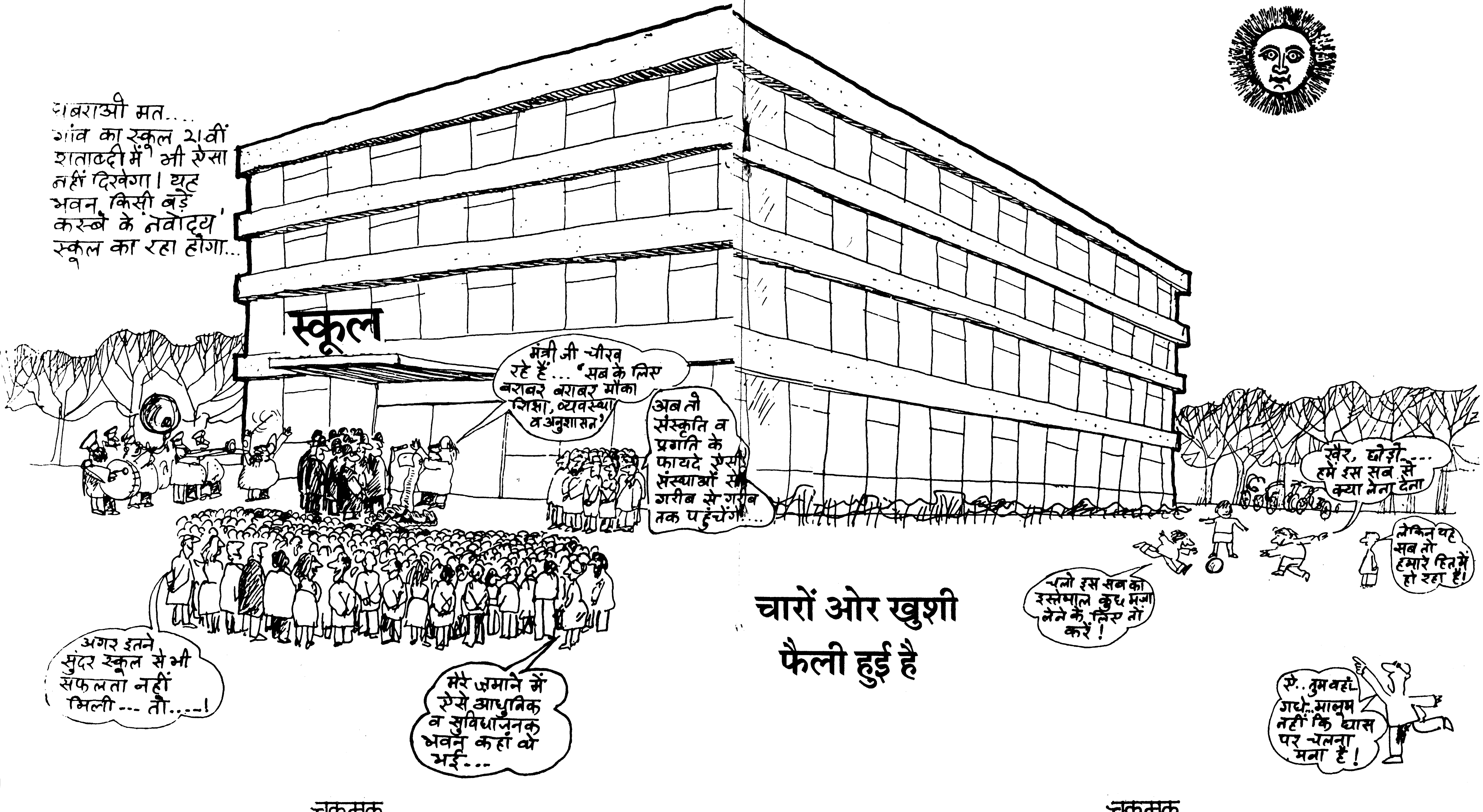

चारों ओर खुशी फैली हुई है

..... लेकिन फिर भी

कुछ बेचैनी सी महसूस हो रही .....

छात्रों में बेचैनी .....

(अगले अंक में जारी)

रूपांतरण : विनोद रायना

सांचा

तुमने बाज़ार में 'प्लास्टर आफ पेरिस' की बनी मूर्तियां देखी होंगी। इन्हें तुम भी बना सकते हो। पिछले अंक में रिलीफ मूर्ति की चर्चा के दौरान हमने कहा भी था कि आगे चलकर तुम्हें प्लास्टर से मूर्ति ढालना बताएंगे। पिछली बार तुमने मिट्टी से हाथी का रिलीफ बनाया था, संभव है संभाल कर रखा हो। अगर न हो तो उसी आकार में दुबारा बना लो। वैसे यह ज़रूरी नहीं है कि हाथी ही हो। पिछली बार जिस आकार का हाथी बनाया था उससे सांचा और फिर सांचे से मूर्ति ढालने के लिए लगभग चार किलो 'प्लास्टर आफ पेरिस' लगेगा। यह तुम्हें हार्डवेयर की दुकान (जहां मकान आदि बनाने का सामान मिलता है) पर मिलेगा। यह पैकेट में मिलता है और चार-पांच रूपए प्रति किलो के हिसाब से। हां, खरीदते समय यह ज़रूर पता कर लेना कि वह अच्छा हो। अच्छा न होने पर दुकानदार को वापस करने की बात पहले ही बता देना। 'अच्छा है या खराब' जांचने का तरीका बाक्स में देखो। एक और बात, पावडर जितना ज़रूरी हो उतना ही खरीदना। बचा हुआ पावडर बहुत सम्हाल कर, पानी तथा नमी से बचाकर रखना होता है। आमतौर पर उसके बाद भी खराब हो जाता है।

अब रिलीफ मूर्ति की प्लेट पर चारों तरफ लगभग पांच सेंटीमीटर ऊंची तथा एक सेंटीमीटर मोटी दीवार खड़ी करो। दीवार प्लेट से चिपकी हुई होनी चाहिए। चारों कोने के जोड़ मिट्टी लगाकर पक्के कर दो।

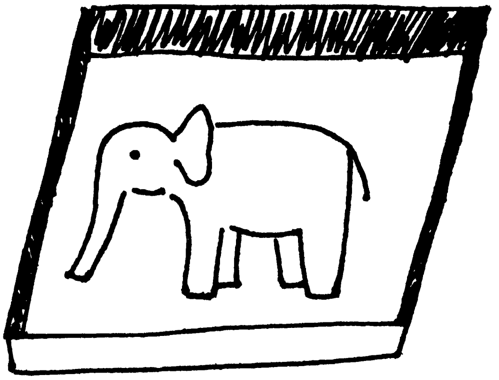

अब किसी बर्तन में लगभग एक लीटर पानी लो और ऊपर से 'प्लास्टर' पावडर डालो। एक लीटर पानी में दो किलो प्लास्टर आराम से घुल जाएगा। शुरू में पावडर भारी होने के कारण नीचे बैठता जाएगा। अगर और अधिक पावडर डालना है तो हाथ डालकर घोलते जाओ। पर ध्यान रखना कि कहीं गुठलियां न पड़ जाएं। ढालने के लिए जो घोल चाहिए वह-भजिए बनाने के लिए तैयार बेसन के घोल की तरह- गाढ़ा होना चाहिए। जब घोल गाढ़ा हो जाए तो उसे प्लेट में भर दो। प्लेट ऊपर तक भरनी चाहिए। अगर घोल कम पड़ रहा हो तो जल्दी से थोड़ा-सा घोल और बना लो। (पर घोल बनाने से पहले बर्तन तथा हाथ साफ कर लेना।) प्लेट जब ऊपर तक भर जाए तो सतह पर हाथ फेर कर एक-सा कर दो। अब हाथ तथा बर्तन को तुरंत साफ कर लो। वरना प्लास्टर जम जाएगा और बाद में साफ करने में दिक्कत होगी। एक बात और याद रखना, प्लास्टर घोलने के बाद उसका तुरंत उपयोग कर लेना नहीं तो वह एक-दो मिनट में बर्तन में ही जम जाएगा और तुम्हारी मेहनत और पैसे बेकार चले जाएंगे।

अब लगभग पंद्रह मिनट बाद सांचे को हाथ लगाकर देखो, गरम महसूस होगा। कुछ देर बाद जब वह ठंडा हो जाए तो चारों तरफ की मिट्टी की दीवारें निकाल दो और प्लेट को उलट कर रख दो। यानी प्लास्टर नीचे और मिट्टी ऊपर। लगभग घंटे भर बाद सारी मिट्टी निकाल दो। इस मिट्टी का दुबारा उपयोग कर सकते हो। पर ध्यान रखना, एक बार जम गए प्लास्टर का दुबारा उपयोग करना संभव नहीं है, इसलिए उतना प्लास्टर ही घोलना जितने की ज़रूरत हो। अब तुम्हारा सांचा तैयार है। इसे पानी से धोकर साफ कर लो। अगर कहीं कोने में मिट्टी लगी रह गई हो तो उसे भी सींक से खुरचकर निकाल दो।

इस सांचे की मदद से ढेर सारी मूर्तियां बनाई जा सकती हैं। एक मूर्ति बनाकर देखें। दो-तीन चम्मच पानी में नहाने या धोने के साबुन का एक छोटा टुकड़ा घोलो (पावडर नहीं चलेगा)। जब घोल थोड़ा चिकना लगने लगे, तब इसमें दो चम्मच नारियल का तेल मिलाओ। इस घोल को कपड़े की चिंदी या ब्रश से पूरे सांचे पर लगाओ। यह घोल सांचे तथा

ढलने वाली मूर्ति को अलग-अलग रखने के लिए लगाया जाता है।

अब सांचे को नीचे बिछाकर उसके चारों तरफ मिट्टी की दीवार उठाओ, ठीक वैसी ही जैसी सांचा बनाते समय उठाई थी। चारों कोनों के जोड़ों को पक्का करो। प्लास्टर घोलो और सांचे में भर दो। जब प्लास्टर जम जाए तो मिट्टी की दीवार हटाओ। सांचे और डाले हुए प्लास्टर के बीच के जोड़ों को साफ करो। अगर प्लास्टर बह कर वहां जमा हो गया है तो उसे भी चाकू से खुरचकर साफ कर दो। अब चाकू या

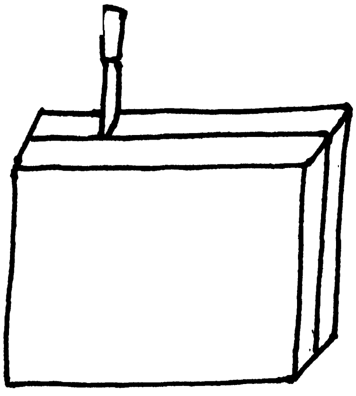

चपटी छेनी जोड़ों में फंसाकर धीरे-धीरे दो-चार बार ठोको। पूरे सांचे को खड़ा करो और धीरे से दोनों को अलग कर लो। अलग-अलग नहीं हो पा रहे हैं तो ऊपर से पानी डालो और धीरे-धीरे हलके से ठोको। दोनों अलग हो जाएंगे। अगर तुम मूर्ति टांगना चाहते हो तो, प्लास्टर का घोल डालते समय ही उसमें तार भी डाल दो।

प्लास्टर : अच्छा है या खराब

छोटी कटोरी या अन्य किसी बर्तन में थोड़ा सा पानी लो और उसमें 2-3 चम्मच प्लास्टर पावडर डालो। उंगली से घोल कर गाढ़ा घोल बनाओ और उसे किसी पत्थर पर डाल दो। दस-पंद्रह मिनट तक पड़ा रहने दो। उसके बाद हाथ लगाकर देखो। हल्का-सा गरम लगेगा। चार-पांच मिनट और ठंडा होने दो। अब इसे हाथ में उठाकर देखो। अगर प्लास्टर जमकर कड़ा हो गया है तो अच्छा है, इसका उपयोग मूर्ति ढालने में कर सकते हो। अगर कड़ा नहीं होता है तो अपने काम का नहीं है।

इस तरह एक सांचे से तुम कई सारी मूर्तियां बना सकते हो। अगर मूर्ति पर कुछ बारीक-बारीक छेद रह गए हों तो प्लास्टर का पतला घोल ब्रश से एक दो बार पूरे रिलीफ पर फेर दो। छेद बंद हो जाएंगे और मूर्ति एक-सी लगने लगेगी। धूप में रखकर सुखा लो तो यह एकदम सफेद हो जाएगी। जब एक-दो दिन अच्छी तरह सूख जाए तो बारीक रेतमाल से इसे हल्के हाथ से रगड़ दो। बारीक पावडर निकलेगा उसे साफ कर दो। तुम्हारी मूर्ति चमकने लगेगी।

☐ विवेक

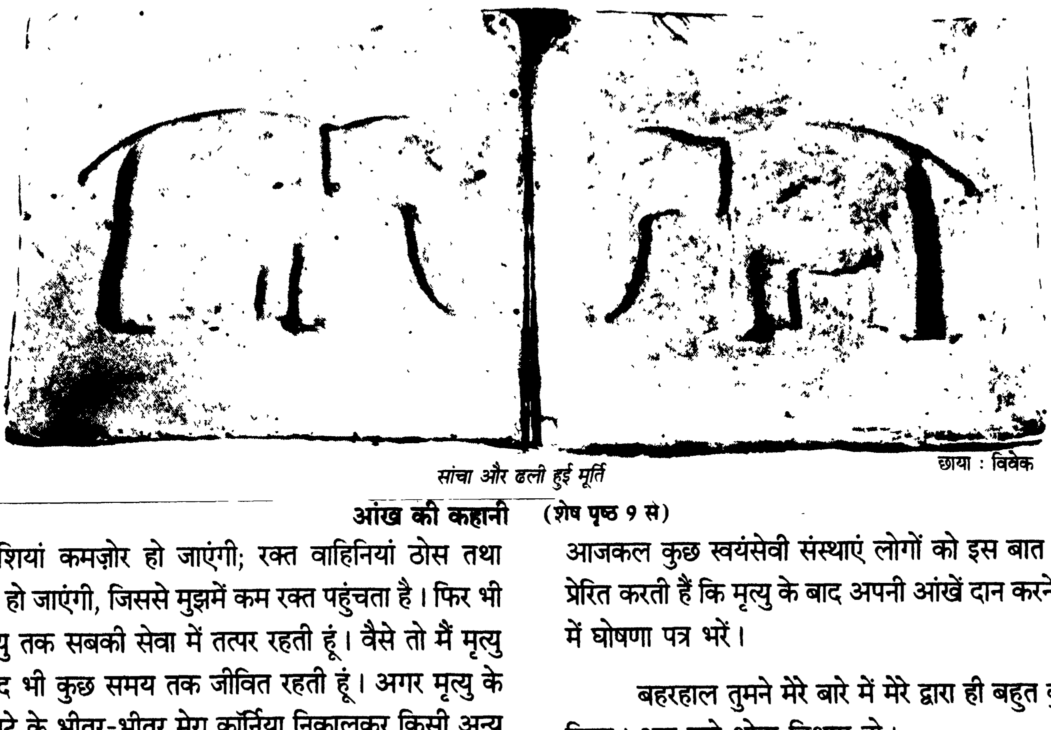

सांचा और ढली हुई मूर्ति

छाया : विवेक

आंख की कहानी (शेष पृष्ठ 9 से)

मौसपेशियां कमज़ोर हो जाएंगी; रक्त वाहिनियां ठोस तथा संकरी हो जाएंगी, जिससे मुझमें कम रक्त पहुंचता है। फिर भी मैं मृत्यु तक सबकी सेवा में तत्पर रहती हूं। वैसे तो मैं मृत्यु के बाद भी कुछ समय तक जीवित रहती हूं। अगर मृत्यु के चार घंटे के भीतर-भीतर मेरा कॉर्निया निकालकर किसी अन्य ज़रूरतमंद व्यक्ति की आंख में लगा दिया जाए तो उसे दृष्टि प्राप्त हो सकती है। 'ब्लड बैंक' की तरह 'नेत्र बैंक' भी हैं। आजकल कुछ स्वयंसेवी संस्थाएं लोगों को इस बात के लिए प्रेरित करती हैं कि मृत्यु के बाद अपनी आंखें दान करने के बारे में घोषणा पत्र भरें।

बहरहाल तुमने मेरे बारे में मेरे द्वारा ही बहुत कुछ पढ़ लिया। अब मुझे थोड़ा विश्राम दो।

(आई एम जोज बॉडी से रूपांतरित)

नर खरमोर

खरमोर

खरमोर देहाती मुर्गे के आकार का पक्षी है। गांव में इसे खड़तितर या भटतितर के नाम से पुकारते हैं। कुछ लोग तृणमयूर भी कहते हैं।

खरमोर को देखने का समय है—बरसात में जुलाई से अक्टूबर तक। बरसात में ही क्यों? इसलिए कि खरमोर बरसात में ही जोड़ा बनाते हैं व प्रजनन करते हैं। इस दौरान ये घास के मैदानों में आ जाते हैं। कभी-कभी घास के मैदानों से आसपास के खेतों (जिनमें मक्का,कपास या सोयाबीन की फसल होती है) में भी चले जाते हैं।

ख़रमोर की उपस्थिति का पता लगाना बहुत ही आसान है। नर खरमोर,मादा को लुभाने एवं अपने प्रतिद्वंद्वी को दूर भगाने केलिए दो-तीन मीटर की ऊंचाई तक उछलता है। यह प्रक्रिया हर पांच-दस मिनट के अंतराल पर होती है। जब खरमोर उछलता है तो यह दृश्य बहुत सुंदर लगता है। उछलते समय वह एक विशेष प्रकार की आवाज़ निकालता है जो मेंढक के टरनि से मिलती-जुलती होती है। उछलते समय उसकी गरदन एकदम पीछे की ओर पीठ से टिक जाती है। उछलने की प्रक्रिया सुबह-सुबह या शाम को होती है। कभी-कभी जब सूर्य बादलों में छिपा रहता है, तबभी उछलना जारी रहता है। नर खरमोर साहब एक दिन में लगभग चार सौ बार उछलते हैं।

क्या मादा खरमोर भी उछलती है या केवल नर ही उछलता है?

हां! केवल नर खरमोर ही उछलता है। पर उस दौरान मादा,नर के आसपास ही होती है। मादा स्वभाव से शर्मीली होती है और यह आवाज़ भी नहीं निकालती है।

खरमोर को उसकी उछलने की आदत से पहचानने का एक तरीका है। वैसे शरीर के रंग-रूप को देखकर भी पहचाना जा सकता है। नर व मादा एक समान नहीं होते हैं। नर, मादा की तुलना में थोड़ा छोटा होता है। उसके सिर के पीछे दोनों तरफ चार-चार पिच्छक (कलगी) निकले रहते हैं। ये पिच्छक उसकी सुंदरता में चार चांद लगा देते हैं। पंखों का अधिकांश भाग सफेद होता है। बाकी शरीर काले रंग का होता है, जिस पर भूरे रंग के धब्बे होते हैं। नीचे का भाग एकदम काला होता है।

मादा खरमोर के सिर पर न तो कलगी होती है और न ही पंखों पर सफेद रंग की आभा। इसके शरीर पर भूरे रंग के धब्बे होते हैं, व दूर से देखने पर ज़मीन से मिलते-जुलते रंग की दिखती है।

जानते हो, इससे क्या फायदा होता होगा?

हां, शायद ज़मीन से मिलते-जुलते रंग के कारण यह शत्रुओं से अपने आपको बचा पाती हो।

ज़रा, ऐसे और पक्षियों के बारे में पता करो जिनका रंग आसपास के वातावरण से मिलता-जुलता है। यह भी पता करो कि क्या ऐसे और भी पक्षी हैं जिनमें नर पक्षी, मादा की अपेक्षा सुंदर होता है!

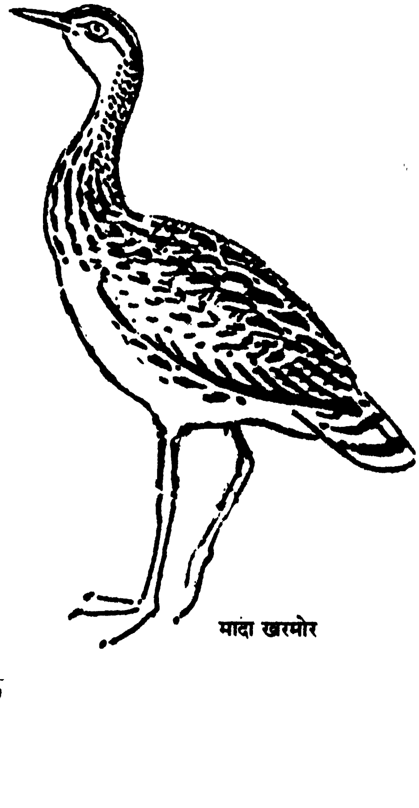

मादा खरमोर

हां, हां, पता कर लेंगे, पर यह तो बताओ कि खरमोर आखिर किस इलाके में पाया जाता है?

खरमोर आज से लगभग दो-तीन दशक पूर्व भारत के घास वाले इलाकों में काफी संख्या में पाया जाता था। किंतु पिछले दस-पंद्रह सालों से इसकी संख्या में एकदम कमी आ गई है। यहां तक कि खरमोर को पक्षियों की विलुप्तशील जातियों में गिना जाने लगा है।

कमी आने का कारण क्या है भला?

एकदम कमी आने का सबसे बड़ा कारण तो यह है कि इसका मांस स्वादिष्ट होने के कारण शिकारी इसके पीछे पड़े रहते हैं। खरमोर का शिकार करना भी बहुत आसान है। खरमोर जब उछलता है, बस तभी दूर निशाना साधे बैठे शिकारी का शिकार बन जाता है। और जब मादा अंडे देने के बाद उनको सेने में मग्न रहती है तब शिकारी चुपचाप दूर से इसे मार देते हैं। कभी ज़िंदा पकड़कर बाद में मार डालते हैं। खरमोर अन्य पक्षियों की तरह घोंसला नहीं बनाते हैं। मादा तीन से पांच अंडे घास या खेत में देती है। खेतों में निंदाई या घास की कटाई के समय ये अंडे नष्ट हो जाते हैं। कई बार चरने वाले ढोर भी इन्हें नष्ट कर देते हैं। इस तरह खरमोर के वंश को आगे ले जाने वाले अंडे भी नहीं बच पाते हैं।

पर भई, इसकी तरफ किसी का ध्यान गया है या नहीं?

हां, गया तो है। 1984 में बांबे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी व मध्यप्रदेश सरकार ने खरमोर की रक्षा करने व संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से एक प्रोजेक्ट बनाया है।

खरमोर के संरक्षण के लिए मध्यप्रदेश में दो अभयारण्य बनाए गए हैं—

1. सरदारपुर खरमोर अभयारण्य, जिला धार। यह 348.12 वर्ग किलोमीटर में फैला है।
2. सैलाना खरमोर अभयारण्य, जिला रतलाम। यह 12.96 वर्ग किलोमीटर में फैला है।

तीन साल पहले धार से लगभग तीन किलोमीटर दूर इंदौर सड़क जैतपुरा के निकट घास के मैदान में खरमोर के तीन-चार जोड़े देखे गए थे।

क्या खरमोर फसलों को नुकसान पहुंचाते हैं?

नहीं भई, खरमोर फसलों को कोई नुकसान नहीं पहुंचाता है। बल्कि यह फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले कई तरह के कीड़ों-मकोड़ों व जंगली पौधों के बीजों को खाता है।

अच्छा, एक सवाल और मन में उठ रहा है कि खरमोर बरसात के मौसम में तो घास वाले इलाके में आ जाते हैं। बाकी समय ये कहां गुजारते होंगे?

भई यह तो अभी पता नहीं चला है कि ये बाकी समय में कहां चले जाते हैं। पर एक बात ज़रूर है कि जिस इलाके में हर साल बरसात में खरमोर आते हैं अगर उस इलाके में सूखा पड़ता है या कम वर्षा होती है तो खरमोर उस इलाके में चले जाते हैं जहां अधिक वर्षा होती है।

हमें तो एक ही बात लगती है कि खरमोर का सबसे बड़ा दुश्मन मनुष्य है। जो अपने स्वार्थ के लिए खरमोर ही नहीं बल्कि इस प्रकृति को नष्ट करने पर तुला है।

यदि तुम अपने इलाके में खरमोर को देखो तो उसकी रक्षा करना व अन्य लोगों को भी इसकी जानकारी देना। और चकमक को भी लिखकर भेजना।

☐ कालूराम शर्मा

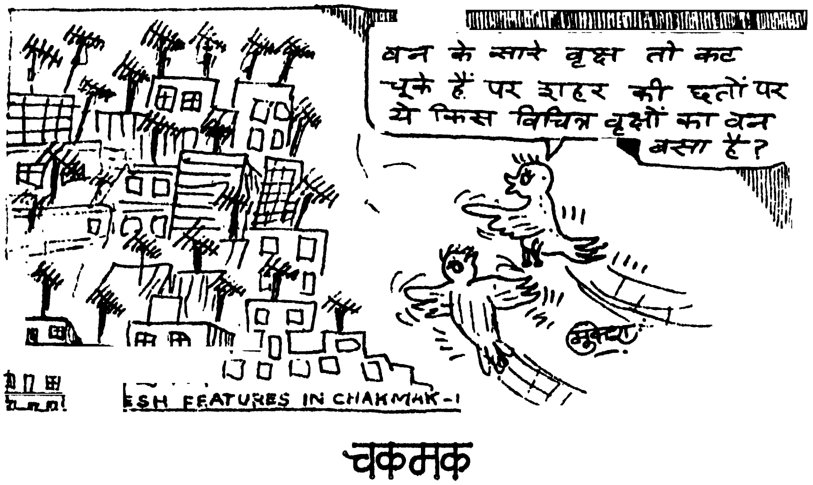

नन्हा राजकुमार

पिछले अंकों में तुमने पढ़ा....

लेखक को बचपन में बड़ों ने चित्र बनाने से हतोत्साहित किया तो वह पायलट बन बैठा। अपनी एक यात्रा के दौरान उसे रेगिस्तान में जहाज़ उतारना पड़ा। वहां उसकी भेंट एक छोटे से राजकुमार से हुई। और फिर परिचय का सिलसिला शुरू हुआ। राजकुमार ने बताया, वह एक छोटे से ग्रह का निवासी है। राजकुमार ने अपने ग्रह के बारे में और बहुत-सी विचित्र बातें बताईं। अब आगे पढ़ो...

मैंने शीघ्र ही उस फूल के बारे में और अच्छी तरह जानना सीख लिया। नन्हे राजकुमार की दुनिया में पंखुड़ियों की एक ही लड़ी वाले सादे से फूल होते थे जो थोड़ी सी जगह में बिना किसी को असुविधा पहुंचाए उग आते थे। घास के बीच सुबह खिलते और शाम को मुरझा जाते थे। परंतु राजकुमार का प्रिय फूल ऐसे बीज से अंकुरित हुआ था जो न जाने कहां से उसकी धरती पर आ गया था। उसका अंकुर अन्य अंकुरों से भिन्न था। राजकुमार ने उसकी बड़ी संलग्नता से देखभाल की थी। उसे डर था कि वह भी किसी दूसरी किस्म की बाओबाब की झाड़ी न हो लेकिन उस पौधे का बढ़ना जल्द ही बंद हो गया और लगा कि एक फूल खिलने वाला है। नन्हा राजकुमार, गदराई सी कली को देख कर सोचता कि इसमें से निश्चय ही एक चमत्कार प्रकट होगा। लेकिन अपनी हरी कोष्ट की छांव में पंखुड़ियों के परिधान चुनती, सजती उस कली का सौंदर्य निखरता ही जा रहा था।

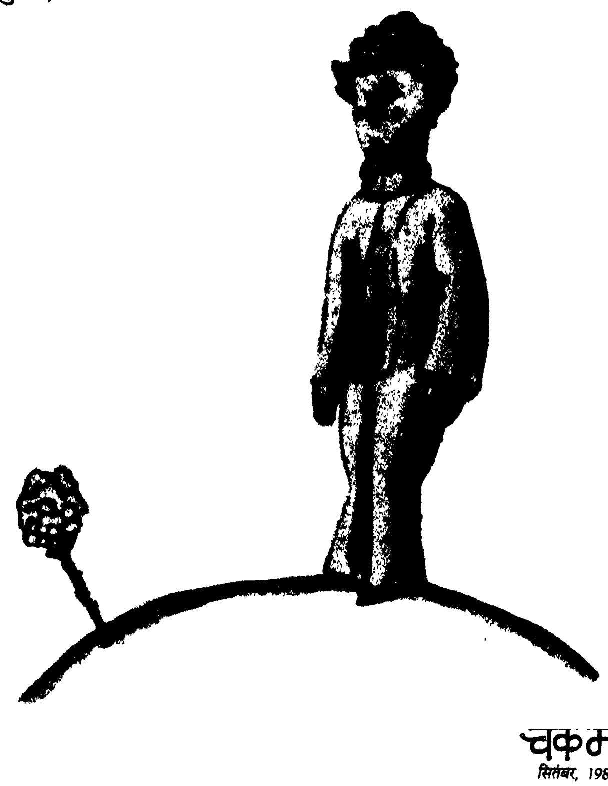

वह अपने सौंदर्य को भरपूर जगमगाहट के पहले साधारण फूलों की तरह प्रकट नहीं होने देना चाहती थी। सच! बहुत शौकीन थी वह। साज सज्जा कितने ही दिन चलती रही और फिर एक दिन उषा की पहली किरण के साथ वह अधखिली कली प्रकट हो ही गई।

इतनी तैयारी के बाद उसने जम्हाई लेते हुए कहा, "ओह! मुश्किल से अभी अभी जागी हूं। क्षमा करना मैं अभी ठीक से तैयार नहीं।" नन्हे राजकुमार की प्रसन्नता की सीमा न रही।

"कितनी सुंदर हो!"

"सच्ची!" अपनी मधुर आवाज़ में इतरा कर वह कली बोली, "मैं सूरज के साथ ही जन्मी हूं।"

राजकुमार समझ गया वह विनम्र नहीं है पर उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहा जा सकता।

"यह नाश्ते का समय है न।" उसने फौरन कहा, "मेरा भी ख्याल करोगे?"

और राजकुमार शरमा गया उसने एक झज्झर ढूंढ कर उसे ताजा पानी से सींच दिया।

कुछ ही दिनों में उस फूल ने राजकुमार को अपने मान भरे अहंकार से परेशान कर डाला। उदाहरण के लिए एक दिन अपने चार कांटों की बात करते हुए उसने राजकुमार से कहा, "खूनी पंजों वाले बाघ भी आ जाएं तो मुझे डर नहीं।"

"मेरे ग्रह पर बाघ नहीं होते और फिर बाघ घास थोड़े ही खाते हैं।" राजकुमार ने विरोध किया।

"मैं घास नहीं हूं।" फूल ने धीरे से कहा।

"क्षमा करना......"

"मुझे बाघ से नहीं पर हवा के झोंकों से डर लगता है। तुम्हारे पास आड़ करने के लिए पर्दा तो नहीं होगा?"

"हवा के झोंकों से डर......एक पौधे के लिए कोई अच्छी बात नहीं।" यह फूल सीधा साधा नहीं लगता। राजकुमार ने सोचा?

"शाम को मुझे ढक देना। यहां बहुत सर्दी पड़ती है। मुझे यहां चैन नहीं। जहां से मैं आई हूं......"

उसे बीच ही में रुकना पड़ा। वह बीज रूप में कहीं और से आई थी और दूसरी किसी दुनिया के बारे में उसे कुछ पता नहीं था। उसने एक मूर्खतापूर्ण झूठ बोलना चाहा था। स्वयं से अपमानित होती हुई मानो राजकुमार को गलत साबित करने के लिए एक दो बार खांसती हुई बोली, "मैंने तुमसे पर्दा मांगा था न!"

"जा रहा हूं ढूंढने......लेकिन तुम कुछ कह रहीं थीं!"

वह जबरदस्ती खांसी थी ताकि राजकुमार को पछतावा हो।

इस प्रकार बावजूद इसके कि वह मन लगा कर उसकी सेवा कर रहा था उसने फूल पर संदेह करना शुरू कर दिया। ऐसे ही कही बातों को बहुत महत्व दे देने के कारण वह दुखी था।

एक दिन उसने धीरे से मुझसे कहा, "मुझे उसकी बात नहीं सुननी चाहिए थी। फूलों को बस देखना और सूंघना चाहिए। उनकी बातें नहीं सुननी चाहिए। मेरे फूल ने संसार को

सुगंध से भर दिया था पर मुझे पता नहीं था कि मैं इस सुख को कैसे भोगूं। काटों की बात, जिससे मैं चिढ़ गया था, वास्तव में उन बातों से मुझमें मृदुभाव पैदा होने चाहिए थे...."

फूल ने फिर चुपके से कहा, "मुझे बिल्कुल समझ नहीं थी। मुझे उसके बारे में उसके शब्दों नहीं, उसके कार्यों के आधार पर निर्णय कर लेना चाहिए था। उसने मेरा सुख, मेरी समझ बढ़ाई थी। मुझे इस तरह पलायन नहीं करना चाहिए था। उसकी कटी-कटी बातों के पीछे से झांकती उसकी कोमलता, उसका प्यार देखना चाहिये था। कितना विरोधाभास होता है फूलों में लेकिन मेरी उमर ही क्या थी कि प्यार करना जानूं।"

मैं सोचता रहा कि वह अपने ग्रह से निकला कैसे होगा। मैंने सोचा कि प्रवासी चिड़ियों के झुंड के साथ उड़ चला होगा। जिस दिन वह रवाना होने वाला था उसने सब ठीक-ठीक किया। अपने दो जीवंत ज्वालामुखी चोटियों पर उसने झाड़ू लगाई। उनकी वजह से उसे सुबह का नाश्ता गर्म करने में बड़ी सुविधा होती थी। एक सुप्त ज्वालामुखी भी था पर, पर कौन जाने..........। उसने उसे भी झाड़ कर ढंक दिया। ज्वालामुखी चिमनी की आग की तरह होते हैं। अगर उन्हें साफ करते रहा जाए तो बिना भड़के धीरे-धीरे सुलगते रहते हैं। पर इस धरती की बात और है। उनके सामने हम इतने छोटे होते हैं कि उन्हें साफ करना या ढंकना संभव नहीं। इसीलिए तो कभी-कभी इतना उत्पात करते रहते हैं ये।

उसे थोड़ा दुख हुआ पर उसने बाओबाब के आखिरी झाड़ उखाड़े। वह सोचता था कि वह कभी लौटेगा नहीं पर ये रोजमर्रा काम करना उस दिन उसे बहुत अच्छा लगा। अपने फूल के ढकने के पहले उसने आखिरी बार पानी दिया तो उसकी आंखें भर आईं "अलविदा!"उसने फूल से कहा।

उसने जवाब नहीं दिया।

"अलविदा!" उसने दुहराया।

फूल ने खांसा लेकिन वह सर्दी वाली खांसी नहीं थी।

"मैं बहुत बुद्धू हूं। मुझे क्षमा करना। खुश रहने की कोशिश करना।"

न डांट न फटकार—उसे बढ़ा आश्चर्य हुआ। ढक्कन लिए गुमसुम खड़ा रह गया। यह शांत मिठास उसकी समझ में नहीं आई।

"मैंने तुझे बहुत प्यार किया," फूल ने कहा, "मेरी ही गलती थी कि तूने कुछ नहीं समझा। पर अब उससे क्या। लेकिन तुम भी मेरी तरह मूर्ख। खुश रहना ...छोड़ो ढक्कन बक्कन अब क्या होगा इसका।"

"लेकिन हवा...!"

"मुझे इतनी सर्दी नहीं लगी है... रात की ताज़ा हवा में मेरी तबियत ठीक हो जाएगी। मैं फूल हूं न!"

"लेकिन जानवर... ... ..."

"अगर मुझे तितलियों को जानना है तो यह ज़रूरी है कि कुछ कीड़ों को भी जानूं। नहीं तो कौन आएगा मेरे पास। तू... तो दूर रहेगा मुझसे। जहां तक बड़े जानवरों का सवाल है मुझे कोई डर नहीं... मेरे कांटे जो हैं।"

एक अल्हड़ की तरह उसने अपने चार कांटे दिखाए और कहा, "ऐसे न खड़े रहो। मुझसे सहा नहीं जा रहा है जाने का निश्चय कर लिया है तो जाओ अब।"

उसकी आंखों के आंसू कोई देखे यह उसके स्वाभिमान को गंवारा नहीं था।

आकाश से विचरता, उसने अपने को 325, 326, 327, 328, 329 और 330 नामक ग्रहों के करीब पाया। उसने कुछ करने, कुछ सीखने के लिए उन ग्रहों में जाने का निश्चय किया।

पहले ग्रह में एक राजा रहता था। फर के गुलाबी और सफेद राजसी वस्त्रों से सुसज्जित वह एक सादे पर शानदार सिंहासन पर बैठा था।

"वाह! यह रही मेरी प्रजा। नन्हे राजकुमार को देखते ही वह चिल्लाया।

राजकुमार ने सोचा, "इसने मुझे पहले तो कभी देखा नहीं फिर कैसे पहचान लिया मुझे।"

वह नहीं जानता था कि राजाओं के लिए दुनिया बड़ी सरल होती है। उनके लिए अपने अलावा सब लोग प्रजा होते हैं।

उस एकाकी राजा ने, जो अब किसी के लिए राजा था, गर्व से कहा, "नज़दीक आ ताकि तुझे देख सकूं।"

राजकुमार ने चारों ओर देखा कि कहां बैठे, पर उस छोटे से ग्रह पर कहीं जगह नहीं थी। हर तरफ राजा के राजसी वस्त्र फैले हुए थे। वह खड़ा ही रहा और चूंकि थक गया था इसलिए उसे जम्हाई आ गई।

"राजा के सामने जम्हाई लेना सभ्यता के विरुद्ध है। ऐसा मत करना अब।" राजा बोला।

राजकुमार के समझ में नहीं आया वह बोला, "कैसे रोकूं! बहुत दूर की यात्रा करके आ रहा हूं और मैं बिलकुल सो नहीं सका हूं।"

"अच्छा तुझे जम्हाई लेने की आज्ञा है। सालों गुज़र गए किसी को जम्हाई लेते देखे। मेरे लिए यह देखना अज़ीब सी बात है। अच्छा! तो ले जम्हाई! मैं आज्ञा देता हूं।"

राजकुमार लाल हो गया। बोला, "अब तो डर लगता है... ... ... अब नहीं आती जम्हाई।"

"हूं! हूं अच्छा तो मैं ... ... तुझे आज्ञा देता हूं कि अभी जम्हाई ले अभी ... ..."

उसे शब्द नहीं मिले। वह परेशान दिखाई पड़ा।

राजा होने के नाते वह चाहता था कि उसकी सत्ता का सम्मान हो। उसे अपनी आज्ञा का उल्लंघन असह्य था। वह एक छत्र राजा था लेकिन चूंकि एक नेक आदमी था वह तर्क संगत आज्ञा ही देता था।

वह कहता, "अगर मैं एक सेनापति से कहूं कि वह बगुला बन जाए और वह मेरी आज्ञा न माने तो इसमें मेरा दोष है उसका नहीं।"

धीरे से राजकुमार ने पूछा, "मैं बैठ जाऊं?"

अपने वस्त्रों को सिकोड़ कर राजा बोला, "मैं तुझे बैठने की आज्ञा देता हूं।"

राजकुमार अचम्भे में था। इतने नन्हे से ग्रह पर वह राजा आखिर राज्य किस पर करता होगा।

"महाराज! क्षमा कीजिएगा। आप से एक प्रश्न पूछूं?"

"मैं तुझे प्रश्न पूछने की आज्ञा देता हूं।"

"आप किस पर राज्य करते हैं?"

"सब पर।" राजा ने सादगी से उत्तर दिया।

"सब पर?"

राजा ने चारों तरफ हाथ घुमा कर ग्रहों और सितारों की ओर इशारा कर दिया।

"इन सब पर?"

"इन सब पर।"

वह एक छत्र ही नहीं, सार्वभौम राजा था।

"सितारे आपकी आज्ञा मानते हैं।"

"हां! हां! राजा बोला। वे तुरंत मेरी आज्ञा का पालन करते हैं मुझे अनुशासनहीनता पसंद नहीं।"

नन्हा राजकुमार ऐसी सत्ता के सामने हतप्रभ था। अगर वह स्वयं इतना शक्तिशाली होता तो उसने केवल चौंतालिस बार नहीं बल्कि बहत्तर, सौ या दो सौ बार सूर्यास्त देखा होता एक ही दिन में—बिना अपनी कुर्सी एक बार भी खिसकाए। और चूंकि अपना घर छोड़ने की वजह से वह उदास था उसने हिम्मत करके राजा से उस पर कृपा करने की मांग की, "मैं सूर्यास्त देखना चाहता हूं ... ... मेरी खुशी के लिए ... सूरज को आज्ञा दीजिए कि वह अस्त हो जाए... ..."

"अगर मैं एक सेनापति को आज्ञा दूं कि वह तितली की तरह एक फूल से दूसरे फूल पर उड़ता फिरे, कि वह एक नाटक लिखे या कि वह एक बगुला बन जाए—और यदि मेरी आज्ञा का पालन न करे तो गलती उसकी होगी या मेरी।"

"आपकी," दृढ़तापूर्वक उससे जवाब दिया।

"बिल्कुल ठीक!", राजा ने कहा, "हर किसी से उसी बात की अपेक्षा रखनी चाहिए जिसके वह लायक हो। सत्ता का आधार न्याय संगत होना चाहिए। यदि कोई राजा अपनी प्रजा से डूब मरने के लिए कहे तो वह क्रांति कर देगी। मुझे अपनी आज्ञा का पालन कराने का अधिकार है क्योंकि मेरी आज्ञा न्यायसंगत होती है।"

"और मेरे सूर्यास्त का क्या हुआ?" राजकुमार ने याद दिलाया। वह एक बार प्रश्न करने के बाद उसे कभी नहीं भूलता था।

"तेरा सूर्यास्त, मिलेगा तुझे। मैं चाहूंगा कि सूर्यास्त हो लेकिन... लेकिन पहले देखना पड़ेगा कि परिस्थितियां अनुकूल हैं या नहीं। यही प्रशासन का तरीका है।"

"ऐसा कब होगा?" राजकुमार ने जानना चाहा।

"हूंऽऽ! एक बड़ा सा कैलेन्डर देखता हुआ राजा बोला। हूंऽऽ ... सूर्यास्त करीब ... करीब सात बज कर चालीस मिनट पर होगा। और तब देखना कैसे मेरी आज्ञा का पालन होता है।"

राजकुमार को जम्हाई आ गई। उसे अफसोस हो रहा था कि वह सूर्यास्त नहीं देख पाएगा। उसे उलझन होने लगी थी।

"मुझे यहां कुछ नहीं लेना देना। मैं चला।" उसने राजा से कहा।

"नहीं नहीं। जा मत। मैं तुझे मंत्री बना दूंगा।" राजा बोला, "उसे गर्व था कि उसकी कोई प्रजा तो है।"

"किस चीज़ का मंत्री।"

"... न्याय मंत्री।"

"लेकिन किसे दूंगा मैं न्याय? यहां कौन है?"

"कौन जाने। मैं बूढ़ा हो गया हूं। चलने फिरने से थक जाता हूं। मैंने अपना राज्य घूम कर देखा भी तो नहीं है।"

"अच्छा? लेकिन मैंने देखा है।" उस छोटे से ग्रह के दूसरी ओर झांकता हुआ राजकुमार बोला, "वहां भी तो कोई नहीं है।"

"अच्छा स्वयं अपने को न्याय देना। वही सबसे मुश्किल है। अपने प्रति न्याय करना दूसरे को न्याय देने से अधिक कठिन होता है। तू अपने साथ न्याय कर सका तो तू सही अर्थों में एक बुद्धिमान और पहुंचा हुआ व्यक्ति कहलाएगा।"

"अगर मुझे अपने ही साथ न्याय करना है तो मैं कहीं भी कर सकता हूं। मुझे यहां रहने की क्या ज़रूरत है।"

"हूं! मुझे विश्वास है कि इस ग्रह पर कहीं एक चूहा भी है। रात को मैं उसकी आवाज सुनता हूं। तू इस बूढ़े चूहे को न्याय देना। कभी-कभी उसे मृत्यु दंड दे दिया करना। इस प्रकार उसका जीवन तेरे न्याय पर आश्रित हो जाएगा। लेकिन उसे माफ भी करते रहना पड़ेगा क्योंकि एक वही तो है। वह भी मर गया तो क्या होगा!"

"मैं... ... ... मुझे मृत्यु दण्ड देना पसंद नहीं। और फिर... मैं... मैं तो जा रहा हूं।"

"नहीं... नहीं।"

लेकिन राजकुमार ने, जो जाने के लिए तत्पर था, राजा को और दुखी करना नहीं चाहा। उसने कहा, "अगर महामहिम को तुरंत अपनी आज्ञा के पालन का सुख लेना हो तो मुझे एक तर्क संगत आज्ञा दें। जैसे आप मुझे आज्ञा दे सकते हैं कि मैं एक मिनट के अंदर यहां से चला जाऊं और मुझे लगता है कि इस आज्ञा के लिए परिस्थितियां अनुकूल हैं।"

राजा ने जवाब नहीं दिया था इसलिए थोड़ा संकोच हुआ फिर एक लंबी सांस लेकर वह रवाना हो गया।

"मैं तुझे अपना राजदूत बनाता हूं।" जल्दी से चिल्लाया राजा। उसके चेहरे पर अधिकारपूर्ण भंगिमा का तनाव दिखाई पड़ रहा था। चलते-चलते नन्हे राजकुमार ने सोचा, ये बड़े-बूढ़े लोग अजीब होते हैं।

(अगले अंक में जारी)

लेखक : सैंतेक्जूपेरी **अनुवाद : लालबहादुर वर्मा**

अपनी प्रयोग शाला (शेष पृष्ठ 17 से)

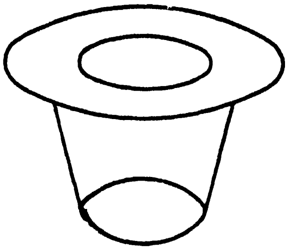

यही प्रक्रिया इस चित्र के साथ भी होती है। बताओ, चित्र में कौन-सा अंडाकार (दीर्घवृत) बड़ा है—नीचे वाला या ऊपर अंदर वाला। नीचे वाला बड़ा लगता है, न! वास्तव में दोनों समान हैं। ऊपर का बाहरी दीर्घवृत हमें भ्रमित करता है। भ्रम का एक और कारण है—चित्र समतली (द्विविम) नहीं बल्कि बाल्टी जैसा व्यौम (त्रिविम) प्रतीत होता है।

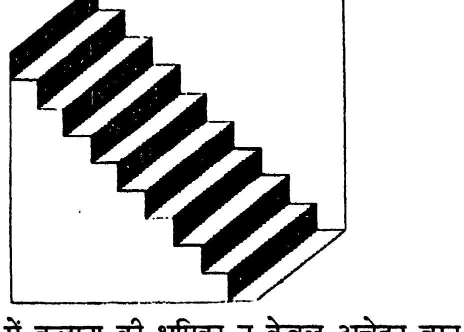

दृष्टि भ्रम में कल्पना की भूमिका न केवल अचेतन वरन् सचेतन भी है। जैसे इन चित्रों में। कभी यह सीढ़ियों जैसा लगता है, कभी उल्टी सीढ़ियों जैसा, और कभी हारमोनियम जैसी मुड़ी कागज़ की पट्टी। तीनों ही अवलोकन सही हैं। उत्तर इस बात पर निर्भर करता है कि हम चित्र को कहां से देखना शुरू करते हैं। यदि निचले बाएं कोने से देखना शुरू करते हैं तो सीढ़ियां नज़र आती हैं। यदि ऊपरी दाएं कोने से देखते हैं तो सीढ़ियां उल्टी दिखती हैं। यदि निचले दाएं कोने से देखते हैं तो कागज़ की मुड़ी पट्टी दिखती है। यदि हम चित्र को लगातार देखते रहेंगे तो हमें तीनों वस्तुएं बारी-बारी से दिखेंगी।

एक आखिरी उदाहरण। चित्र में दिखाया वृत अंडाकार दिखता है। शायद निगाहें घुमाने से यह भ्रम उत्पन्न होता है।

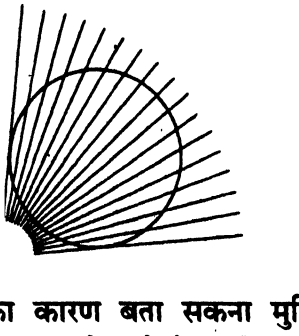

सभी भ्रमों का कारण बता सकना मुश्किल है। आखिर, हम मस्तिष्क के बारे में अभी भी बहुत कम जानते हैं।

माथापच्ची

	न	म	आ
	ई	र	स
ब	त	ऊं	ग

यहां वर्ग में कुछ अक्षर (स्वर व व्यंजन) दिए गए हैं। साथ ही बाहर ब व्यंजन दिया गया है। तुम्हें इन अक्षरों की मदद से कम से कम 20 शब्द बनाने हैं। शर्त यह है कि,

1. प्रत्येक शब्द में 'ब' आना चाहिए,
2. एक अक्षर का उपयोग एक बार ही किया जा सकता है,
3. वर्ग में दिए अक्षरों के अलावा अन्य किसी अक्षर का उपयोग नहीं किया जा सकता,
4. बनने वाले शब्द का कुछ अर्थ भी होने चाहिए, जैसे बस, बन आदि।

(2)

मान लो किसी गांव की जनसंख्या में प्रतिवर्ष 10% वृद्धि होती है। यदि गांव की वर्तमान जनसंख्या 1000 है; तो तीन साल बाद जनसख्या ।कतना हागा :

1300 1231 1321 1331

(3)

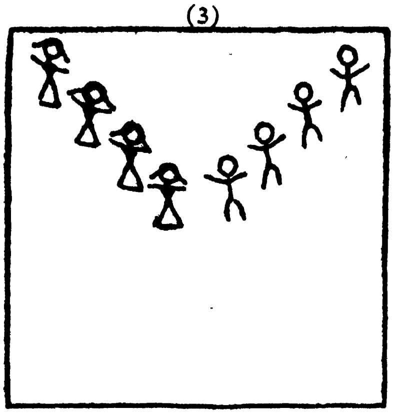

इस चौकोर मैदान में चार लड़के और चार लड़कियां खड़े हैं। क्या तुम इस मैदान में लकीरें खींचकर उसे चार समान हिस्सों में इस तरह विभाजित कर सकते हो कि प्रत्येक भाग में एक लड़का और एक लड़की हो।

(4)

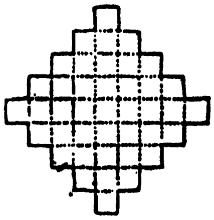

इस आकृति को चार टुकड़ों में काटकर, टुकड़ों को दुबारा इस तरह जोड़ो कि एक चौकोर बन जाए।

(5)

एक ईंट का वज़न चार किलोग्राम है। मान लो कि हम एक और ईंट बनाते हैं जिसकी लंबाई, चौड़ाई और ऊंचाई इस ईंट से चार गुना है। बताओ, इस नई ईंट का वजन क्या होगा?

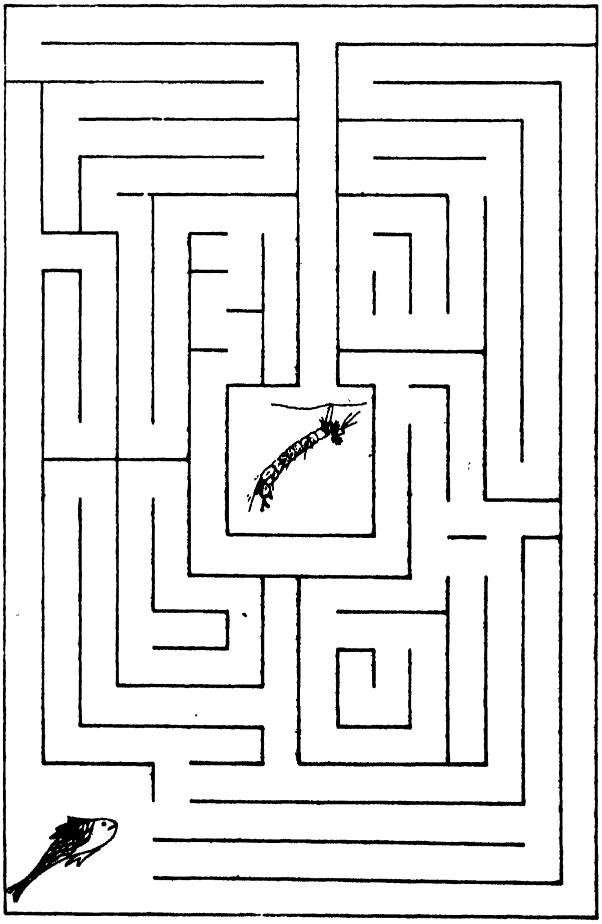

(6) मछली लार्वा तक कैसे पहुंचे?

(7)

यह चित्र बिंदुओं को जोड़-जोड़ कर बनाया गया है। चित्र में छह ऐसे बिंदु हैं जहां बिंदुओं को जोड़ने वाली रेखा समाप्त हो जाती है; जैसे गरदन और कान में। पहेली यह है कि टोपी के ऊपर, बीच में बने बड़े बिंदु से शुरू करके, रेखाओं पर चलकर, इन छह बिंदुओं में से किसी एक पर पहुंचना है। शर्त यह है कि चलते समय बिंदुओं की गिनती करनी होगी और आखिरी बिंदु का क्रमांक 25 होगा। यानी गिनती में बिंदु क्रमांक 1 वह बड़ा बिंदु है जहां से तुमने गिनना शुरू किया (टोपी के ऊपर) और पच्चीसवां बिंदु वह आखिरी बिंदु होगा जहां तुम्हारा सफर खत्म होगा (उदाहरण के लिए, कान का बिंदु)। हां, एक बात याद रखना, इस पहेली के एक से अधिक उत्तर संभव हैं। देखें तुम कितने ढूंढ पाते हो।

जल्दी से बूझो

आजकल कुछ पेड़ या पौधे ऐसे होते हैं जिनकी जड़ों या शाखाओं को बार-बार काटा जाता है ताकि पेड़ बड़े नहीं, छोटा ही रहे। पर मजेदार बात यह कि पेड़ में फूल-फल भी लगते हैं। बूझो तो इन बौने पेड़-पौधों का नाम क्या है?

कभी-कभी जब आंधी आती है तब हवा और धूल तेज़ी से उड़कर गोल-गोल घूमने लगती हैं। इस घटना को क्या कहते हैं।

तुमको शायद मालूम होगा कि प्रकाश लगभग 300000 कि.मी. प्रति सेकण्ड की गति से चलता है। प्रकाश एक साल में जो दूरी तय करता है, उसे क्या कहते हैं?

कभी-कभी चंद्रमा, पृथ्वी और सूर्य के बीच आकर सूर्य के

क्या कहते हैं?

वह कौन सी धातु है जो सामान्य तापमान (कमरे का तापमान) पर द्रव के रूप में रहती है?

वर्ग पहेली : 12

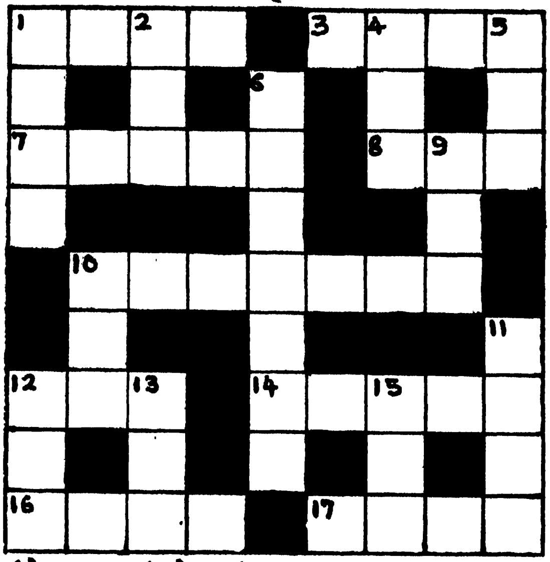

संकेत : बाएं से दाएं

1. ताकतवर (4)
3. यह बीत चुका (4)
7. समाज संबंधी
8. पुहास की गड़बड़ से एक प्रकार का आम (3)
10. बारिश के मंडूक (4, 3)
12. माता (3)
14. जब भर जाएगा तो फूटेगा ही (2, 1, 2)
16. शूद्रों को गांधीजी द्वारा दिया गया नाम (4)
17. एक पटाखा पुष्पवर्षा करता हुआ (4)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. साब तर हो गई बारिश (4)
2. वचन (3)
4. जहां तीन रास्ते मिलते हों (3)
5. रसदार (3)
9. नर्मदा पुल कसने में आनद (3)
10. अब दनदनाती गोलियों के बीच शरीर (3)
11. तांगा नहीं पर घोड़े वाली (4)
12. विश्व आधा हरा, स्थान के लिए (3)
13. रजनी की गड़बड़ से कमल (3)
15. आधा काला, उसके बाद पानी फिर भी काला (3)

(8)

हवा में एक गुब्बारा उड़ रहा है। उस पर कुछ झंडे लगे हैं। मान लो गुब्बारा उत्तर दिशा में उड़ रहा है, तो उस पर लगे झंडे किस दिशा में फहरा रहे होंगे?

(9)

पैमाने की मदद से गेंद का व्यास नापने का एक सरल तरीका सुझाओ।

गिजुभाई की कलम से..

तीरंदाज़

एक था तीरंदाज़। तीर ऐसा चलाता कि उड़ते पंछी को मार गिराता। दौड़ते हिरन और तैरती मछली को बेध डालता। आप जिस पत्ती के लिए कहें, वह उसी को गिरा देता। सेब पर निशाना ऐसा ताकता कि ठीक बीच से उसकी दो फांकें हो जाती। भले ही सेब पचास फुट दूर हो, चाहे सौ फुट दूर हो। सारे गांव में उसका कोई जोड़ नहीं। सारे इलाके में वही अकेला एक तीरंदाज़ था। समूचे देश में उसके नाम का डंका बजा करता था। सब कोई कहते : "टेल की बराबरी करनेवाला दूसरा कोई तीरंदाज़ है ही नहीं। दूसरे जो हैं, सो हैं, लेकिन टेल की टक्कर का तो एक टेल ही है।"

टेल का पूरा नाम था, विलियम टेल। उसके गांव का नाम था, बर्गलेन। उसके देश का नाम, स्विट्ज़रलैण्ड। ये सब नए ही नए नाम हैं न? ये नाम अपने देश के नहीं हैं। ये हैं, समन्दर के उस पार बसे एक देश के।

टेल के दो लड़के थे। एक का नाम था, विलियम और दूसरे का, वॉल्टर। सचमुच जैसा नाम था, बेटे भी वैसे ही थे। विलियम भी बहादुर और वॉल्टर भी बहादुर। इनमें भी वॉल्टर तो शेर का बच्चा ठहरा।

रविवार का दिन था। टेल अपनी ससुराल जा रहा था। तीर-कमान बांध रहा था। इतने में वॉल्टर दौड़ता-दौड़ता आया और बोला, "पिताजी, आप कहां जा रहे हैं?"

"तुम्हारे नानाजी के घर। तुम चलोगे?"

"चलना तो है, लेकिन मां कहें, तो चलूं। मां, मैं जाऊं?"

"जाओ, ज़रूर जाओ, मैं तुम्हें क्यों रोकूं?"

"वॉल्टर! जल्दी करो। लौटते समय रात हो जाएगी।"

"बस जूते पहनकर आ ही रहा हूं।"

"मां मैं जा रहा हूं।"

"बेटा, संभल कर जाना।"

"अच्छा मां।"

"वॉल्टर को संभालिए।"

"तुम फिकर मत करो!"

सुबह के सूरज की कोमल धूप तप रही है। दूर-दूर के पहाड़ नीले दीख रहे हैं समुद्र की गर्जना सुनाई पड़ रही है। बाप और बेटा दोनों धीमी चाल से आगे बढ़ रहे हैं।

बेटे ने पूछा, "पिताजी, आपका तीर कितनी दूर तक जाता है?"

"बहुत दूर तक; इतनी दूर कि तुमको दिखाई न पड़े।"

"यह जो सूरज दीख रहा है, उसके पास तक जाता है?

"पागल कहीं के, क्या कोई तीर इतनी दूर जा सकता है?

"तो क्या वह बरफ से ढंके उन पहाड़ों तक पहुंचता है?'

"नहीं, वहां तक भी नहीं पहुंचता।"

"तो कहां तक पहुंचता है?"

"किसी दिन तीर चलाकर तुमको दिखा दूंगा।"

"लेकिन पिताजी, कल आपकी कहीं कोई सभा थी न?'

"हां भाई, सभा थी तो सही!"

"सभा में क्या हुआ था?"

"तुमको क्या बताऊं? तुम समझोगे नहीं। अभी तुम छोटे हो।"

"भला, मैं क्यों नहीं समझूंगा? मैं तो आप ही का बेटा हूं।'

"तुम ठीक कहते हो।"

"छोटा होते हुए भी मैं तीर चलाना तो जानता हूं न?"

"लेकिन क्या तुम मेरी तरह तीर चला सकते हो?"

"जब मैं आपकी उमर पा जाऊंगा, तो इस मामले में आपसे भी आगे बढ़ जाऊंगा।"

"अगर ऐसी ही बात है, तो मुझको तुम्हें सारी बातें कहनी ही होंगी।"

"हां, तो कहनी ही चाहिए न?"

"सुनो बेटा, आज हमारा यह देश दूसरों के कब्जे में है। उन्होंने हमको गुलाम बना रखा है। पराई हुकूमत को हम कैसे सहन कर सकते हैं? कल मैंने एक कठोर प्रतिज्ञा की है। इस नई सरकार को उखाड़ फेंकने की प्रतिज्ञा।"

"आपने ऐसी प्रतिज्ञा की है? तो आप इसको किस तरह उखाड़ फेंकेंगे? क्या यह कोई पेड़ है?"

"तुम अभी इसे समझ नहीं सकोगे।"

"अच्छी बात है। लेकिन पिताजी, उस टोपी को तो देखिए। उसको वहां उस खम्भे पर क्यों लटका रखा है? देखिए, वह हवा में इधर-उधर झूल रही है।"

"होगा कुछ! हमको उससे क्या मतलब?"

"पिताजी, कहिए न कि उसको वहां क्यों टांग रखा है?"

"भाई, तुम तो बहुत सिर पचाते हो?"

"नहीं पिताजी! कुछ कहिए ना।"

"सुनो, मैंने तुमसे कहा था न कि हम गुलाम बनाए गए हैं। तुमने इस गैस्लर का नाम तो सुना है न?"

"जी हां, हमारे इस गांव का राजा।"

"राजा कैसा? राजा का एक नौकर-सूबा।"

"तो इसकी क्या बात है?"

"यह बहुत ही दुष्ट है। यह हमारा अपमान करना चाहता है। इसने हुक्म जारी किया है कि इधर से निकलनेवाला हर कोई इस टोपी को सलाम करे। जो सलाम न करे, उसे गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया जाए।"

"अच्छा, ऐसा हुक्म जारी किया है? यह तो बहुत बड़ी ज़्यादती है। ऐसी सरकार को तो उलट ही देना चाहिए। पिताजी, आपने जो प्रतिज्ञा की है, आप उसका पूरा-पूरा पालन ज़रूर कीजिए।"

"ऐ टेल! उधर कहां जा रहा है? इसे देखता नहीं है? आंखें हैं या नहीं? इस टोपी को सलाम करता जा।'

"पिताजी! हमको रोकने-टोकनेवाले ये कौन हैं?"

"बेटा, ये हमारी नई सरकार के सिपाही हैं।"

"समझ गया, पिताजी, मैं समझ गया।"

"क्यों टेल, तुम सुनते हो या नहीं? इस टोपी को सलाम किए बिना तुम आगे नहीं बढ़ सकोगे।"

"क्या कहते हो?"

"ठीक ही कहता हूं।"

"जानते नहीं हो कि सरकार का यही हुक्म है? इस टोपी के सामने अपना सिर झुकाए बिना तुम आगे नहीं जा सकोगे।"

"भैया जाने दो न?"

"कैसे जाने दूं? हुक्म है, हुक्म!"

"राजा का हुक्म तो है नहीं। हुक्म है, इस हरामी गैस्लर का। मैं इसके हुक्म को नहीं मानूंगा।"

"नहीं मानोगे? खबरदार! बिना सिर झुकाए आगे बढ़ोगे, तो तुम्हारा सिर खतरे में पड़ जाएगा। इस टोपी का अपमान करना आसान नहीं है। बोलो, सलाम करोगे या नहीं? टोपी के आगे झुकोगे या नहीं?"

"सलाम? इस सड़ी टोपी को सलाम? हरगिज नहीं। यह कभी हो नहीं सकता। नहीं झुकेगा, नहीं झुकेगा, इस टोपी के सामने मेरा सिर नहीं झुकेगा।"

सिपाही टेल को गिरफ्तार करने के लिए दौड़े। वहां इकट्ठा हुए लोगों ने शोर मचाना शुरू कर दिया। वे भला, टेल को गिरफ्तार क्यों होने देते? वे सब तो जनता के ही लोग थे। लेकिन गैस्लर के सिपाही बड़े चालाक निकले। वे झूठ-मूठ की दौड़-भाग करने लगे और चिल्लाने लगे, "दौड़ो, दौड़ो! दंगा, दंगा। राजद्रोह, राजद्रोह!" असल में न वहां कोई दंगा हो रहा था, न कोई राजद्रोह ही कर रहा था। लेकिन चालाक लोग अपनी चालाकी ऐसे ही मौकों पर दिखाते हैं।

गैस्लर का रौब कोई मामूली रौब नहीं था। उसका अभिमान तो कहीं समाता ही नहीं था। उसके एक हाथ में घोड़े की लगाम भी और दूसरा हाथ मूंछों पर घूम रहा था। उसे सत्ता का नशा चढ़ा था। वह शराबी-सा दीख रहा था।

बेचारे लोग! सत्ता से डरनेवाले लोग! जैसे ही गैस्लर वहां पहुंचा; लोग एक साथ पुकार उठे ; "रास्ता छोड़ो, रास्ता छोड़ो दूर हटो, सरकार तशरीफ ला रहे हैं!"

गैस्लर जोर से कड़क कर बोला, "दंगा करनेवाला वह बदमाश कहां है? टोपी के आगे झुकने से साफ इंकार कर रहा है। कितना बेवफा है? क्या यह कोई मामूली राजद्रोह है?"

गैस्लर की आंखों से आग बरस रही थी। गुस्से से वह थरथर कांप रहा था। बोला, "मेरे हुक्म का अपमान! टेल, तुम सुन रहे हो न? क्या तुम मेरे हुक्म की इज्जत नहीं करोगे? बोलो, क्या सोच रहे हो?"

"हां, मैं इस सड़ी टोपी के सामने सर नहीं झुकाऊंगा।"

"क्या तुम जानते नहीं हो कि मैं सारे देश का हाकिम हूं? टेल, मान जाओ। टोपी को सलाम कर लो। याद रखो, सलाम नहीं करोगे, तो तुम्हारी जान खतरे में पड़ जाएगी।"

"खतरा? जान का खतरा? मुझको अपनी जान की कोई परवाह ही नहीं है। जिस दिन से मैंने आपकी सरकार को उखाड़ फेंकने की प्रतिज्ञा ली है, उसी दिन से मैं अपना सिर अपने हाथ में लेकर घूम रहा हूं। मुझको मार डालना हो, तो मार डालिए। मेरे मुरदे से अपनी टोपी को सलाम करवाना हो, तो करवा लीजिए। लेकिन जीते जी तो यह टेल इस टोपी के आगे कभी झुकेगा ही नहीं!"

दुश्मन मन-ही-मन पुकार उठे, "शाबाश, टेल, शाबाश! शाबाश, तुम्हारी देश-भक्ति को! शाबाश तुम्हारे देश-प्रेम को।"

गैस्लर ने चारों ओर निगाह दौड़ाकर देखा। वह तुरंत ही ताड़ गया कि लोग तो टेल के साथ हैं।

वह पक्का बदमाश था। बड़ा खटपटी और बेरहम भी था। बात बदलकर बोला, "टेल, मैंने सुना है कि तुम एक बहुत बड़े तीरंदाज़ हो। क्या यह सच है? मैं तो मानता हूं कि तुम बड़े शेखीबाज़ हो।"

नन्हा वॉल्टर अचानक ही बोला, "साहब, बिल्कुल सच बात है। मेरे पिताजी तीर इस तरह चलाते हैं कि सौ फुट की दूरी पर रखे हुए सेब को भी बिना चूके बेध देते हैं, और ठीक बीचों-बीच बेधते हैं।"

"टेल, क्या यह तुम्हारा लड़का है?"

"जी हां, यह मेरा लड़का है।"

"तुम्हारे कितने लड़के हैं!"

"दो!"

"यह तो तुमको बड़ा प्यारा लगता होगा? सच है न?"

"प्यारे तो दोनों ही लगते हैं लेकिन छोटा होने के कारण यह ज़्यादा प्यारा लगता है।"

"सुनो, टेल! मैं यह सेब तुम्हारे इस लड़के के सिर पर रख रहा हूं। सौ फुट दूर खड़े रहकर तुमको इसे बेधना है। याद रखना, ऐ घमंडी तीरंदाज़! अगर तुम निशाना चूके, तो तुम्हारे धड़ पर सिर नहीं रहेगा।"

"अपने वॉल्टर के सिर पर रखे सेब को मैं बेधूं?"

"नहीं बेधोगे तो जाओगे कहां? सब कोई कहते हैं कि तुम बड़े तीरंदाज़ हो। तो आज अपनी वह तीरंदाज़ी यहां दिखाओ।"

टेल का दिल फट रहा था। दुष्ट गैस्लर की चाल को वह समझ चुका था। उसने कहा, "सरकार, आप यह क्या कह रहे हैं? ऐसा खतरनाक हुक्म? मैं अपने ही बेटे पर निशाना ताकूं? नहीं-नहीं, मुझसे यह नहीं होगा। मेरी जान चाहे चली जाए पर यह काम तो मैं हरगिज नहीं करूंगा।"

"सुनो टेल, यह सेब तो तुमको बेधना ही पड़ेगा। मेरा हुक्म है। तुरंत तैयार हो जाओ, नाहक देर न लगाओ।"

"क्या मुझको अपने ही हाथों अपने प्यारे पुत्र की जान लेनी होगी? हे भगवान!"

"भूल जाओ अपने भगवान को।"

"सरकार, क्या आपका अपना कोई दिल नहीं है? आपके अपनी कोई संतान नहीं है? क्या पिता के प्रेम को आपने कभी जाना नहीं है?"

"टेल, तुम तुरंत तैयार हो जाओ। तुम्हारी ये सयानपतभरी बातें मुझको सुननी नहीं हैं। आज मैं देखना चाहता हूं कि ऑस्ट्रिया की सरकार को उलट देने की प्रतिज्ञा करनेवाला टेल सचमुच कितना बहादुर है?"

"हे भगवान!"

"जाओ, पहले उस लड़के को बांध दो और फिर उसके सिर पर सेब रख दो।"

"मुझको क्यों बांधते हैं? मैं नहीं बंधूंगा। आप जहां कहेंगे, मैं वहीं शांत और सुस्थिर खड़ा रहूंगा।"

"अच्छा, तो इसकी आंखों पर पट्टी बांध दो। बेचारा डर जाएगा।"

"पट्टी क्यों बांधते हैं? क्या आप मानते हैं कि मैं अपने पिताजी के तीर से डरता हूं? बिलकुल नहीं। आप भरोसा कीजिए कि मैं अपनी आंखों की पलक तक गिरने नहीं दूंगा।"

पिता का दिल खुशी से भर उठा। लेकिन साथ ही फिकर से सहम भी गया।

टेल ने वॉल्टर के सामने देखा।

वॉल्टर ने टेल के सामने देखा।

"पिताजी, आप घबराइए नहीं। मैं बिल्कुल नहीं डरूंगा। आप अपना तीर बेखटके छोड़िए।"

"वाह-वाह! जैसा बाप वैसा ही बेटा!"

चारों तरफ चुप्पी छा गई! न कोई हिलता था, न डुलता था। छातियां धड़क रही थीं। सांसें धीमी गति से चल रही थीं। निगाहें टेल पर गड़ी थीं, वॉल्टर पर गड़ी थीं। लोग सोच रहे थे, "क्या होगा? सेब बेधा जाएगा? कहीं बेटा तो नहीं बिंध जाएगा? अरे ओ पापी गैस्लर! तेरा सर्वनाश हो जाए!"

"लेकिन टेल बहादुर है। उसका निशाना अचूक ही होता है।"

वॉल्टर के सिर पर सेब था। वह न हिल रहा था, न डुल रहा था। ऐसा लगता था, मानो कोई पुतला खड़ा हो। वॉल्टर की आंखें टेल पर गड़ी थीं। वे ऐसी लग रही थीं, मानो कांच की आंखें बैठा दी गई हों।

टेल ने प्रार्थना की। अपने मन को सुस्थिर किया। आसमान की तरफ देखा। पापी गैस्लर की तरफ देखा। अपने बेटे की तरफ देखा। चारों ओर शांति छा चुकी थी।

टेल ने तीर-कमान हाथ में लिए। डोर खींचकर टंकर की। तीर चढ़ाया।

दिल हाहाकार कर उठे। लोग बोले, "सत्यानाश हो, इस गैस्लर का!"

एक पैर आगे रखा। एक पैर पीछे जमाया। टेल तैयार हो गया। पूरी तरह तैयार हो गया। लेकिन बेटे पर बाण कैसे छूटे? सामने से आवाज़ आई "पिताजी! तीर छोड़िए। डरिए मत।"

सुन्न्न् करता हुआ तीर छूटा।

"शाबाश टेल! शाबाश टेल!"

"शाबाश वॉल्टर! शाबाश वॉल्टर!"

वॉल्टर ने दौड़कर लोगों से पूछा, "पिताजी कहां?" पिताजी तो बेहोश पड़े थे।

"पिताजी! उठिए! सेब बेधा जा चुका है।"

पिता-पुत्र गले मिले। आंसुओं की धारा बह चली। वॉल्टर अमर हो गया। टेल अमर हो गया। आज उस जगह एक पुतला खड़ा है। हाथ में तीर-कमान हैं। पास में एक लड़का खड़ा है। लोग कहते हैं : "यह पुतला बहादुर तीरंदाज़ विलियम टेल का है। और वह, टेल के निडर बेटे वॉल्टर का है।"

('कस्तूरबा दर्शन' के बाल शिक्षण विशेषांक से साभार; गुजराती से अनुवाद : काशिनाथ त्रिवेदी)

सभी चित्र : विवेक

उत्तर : माह अगस्त के

वर्ग पहेली 11 : हल

1 कि	2 ता	ब		3 ध		4 फ		5 स
	श		6 न	र्म	दा	सा	ग	र
7 बे	का	र		रा		द		ल
	म		8 जा	ज	9 म		10 श	
11 स	ह	यो	ग		12 श	र	त्र	त
	ल		13 ना	14 न	क		गं	
15 स		16 अ		वा		17 अ	कं	ला
18 ब	गु	ला	भ	ग	त		त्र	
क		व		त		19 भा	र	त

चित्र में तुमने देखा होगा कि प्रत्येक पंक्ति (आड़ी व खड़ी) में एक मेंढक बैठा है। अब तीन मेंढक अपनी जगह बदलना चाहते हैं तो वास्तव में इन तीन पंक्तियों में ही अदला-बदली होगी। शर्तों को भी ध्यान में रखना है। यह संभव है। पहले हर मेंढक का नाम रख लें। ऊपर से शुरू करें, रजिया, नरेश, सरला, अनिल, याकूब, शरीफ, जगजीत और गीता।

जो मेंढक कूद सकते हैं वे हैं, सरला (तीसरी आड़ी पंक्ति); अनिल (चौथी आड़ी पंक्ति) और जगजीत (सातवीं आड़ी पंक्ति)। ये इस तरह अपनी जगह बदलेंगे—सरला, सातवीं आड़ी पंक्ति के दूसरे गिलास पर; अनिल, तीसरी पंक्ति के आठवें गिलास पर और जगजीत, चौथी आड़ी पंक्ति के चौथे गिलास पर।

5. तीन ओर रंगे आठ; दो ओर रंगे चौबीस; एक ओर रंगे चौबीस और बिना रंगे आठ।

7.

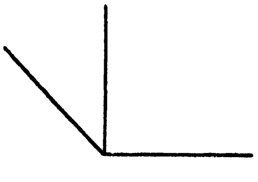

9.

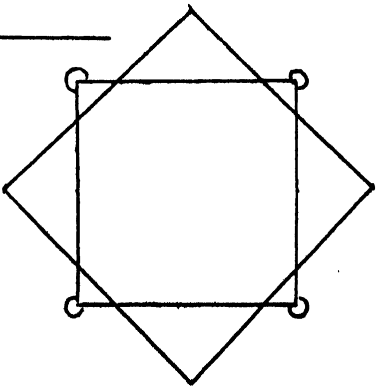

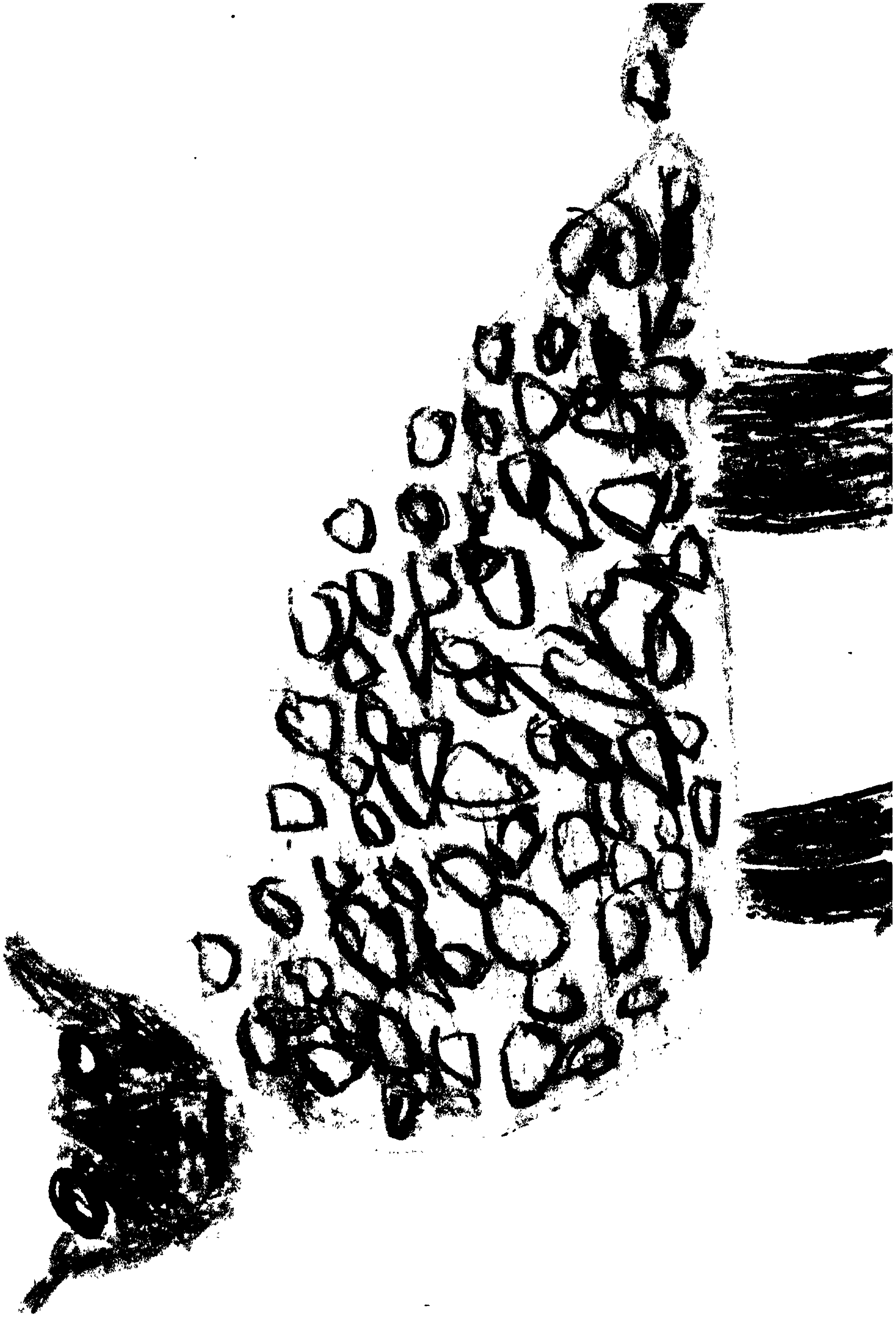

चकम
...न क्रमांक BPL/DN/MP/431/88

12698

बरसाती पहने और छाता लगाए आदमी
शेषाद्री (सेशू), चार वर्ष, सरदार पटेल विद्यालय, दिल्ली

एकलव्य के लिए विनोद रायना द्वारा प्रकाशित
एवं ज्योति ऑफसेट प्रिंटर्स भोपाल द्वारा मुद्रित

कागज 'यूनिसेफ' के सौजन्य से
आंशिक वित्तीय सहयोग : एन.सी.एस.टी.सी (डी.एस.टी.)